ISSN-0970-6518

हरियाणा खेती

स्वर्ण-जयंती वर्ष
2 फरवरी 2019 - 1 फरवरी 2020

वर्ष 52 अंक 06

जून 2019

वार्षिक चंदा ₹ 150

आजीवन सदस्यता ₹ 1500

प्रकाशन अनुभाग
विस्तार शिक्षा निदेशालय
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा खेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. (2) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित

ã कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 52 | जून 2019 | अंक 06

इस अंक में

लेख का नाम		लेखक का नाम	पृष्ठ
तिल की फसल- कम लागत अधिक लाभ	-	सत्यजीत, एस. पी. यादव एवं उमेश कुमार शर्मा	1
गुणों से भरपूर - हरी खाद	-	उमा देवी, पवन कुमार एवं धीरज पंघाल	2
कपास में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण व उनका निवारण	-	पूजा रानी, विकास हुड्डा एवं मनोज कुमार	3
कृषि में रासायनिक पदार्थों का बढ़ता प्रयोग : सूक्ष्मजीवों एवं प्राकृतिक स्थिरता पर प्रभाव	-	सीमा सांगवान, सुशीला सिंह एवं मीना	4
मूंगफली की फसल : बीमारियों तथा कीड़ों से बचाव	-	नरेंद्र सिंह यादव, बलबीर सिंह एवं एस. पी. यादव	5
फलदार पौधों को गर्मी व लू से बचाएं	-	सुलेमान मोहम्मद एवं विरेन्द्र सिंह	6
लोबिया : एक पौष्टिक चारे वाली दलहनी फसल	-	सतपाल, डी.एस. फोगाट एवं दलविंदर पाल सिंह	7
क्षारीय एवं लवणीय मृदा की पहचान एवं सुधार	-	राकेश कुमार, मनोज कुमार शर्मा एवं विकास	8
एलोवेरा : एक चमत्कारिक पौधा	-	राजेश लाठर, वंदना एवं गुरनाम सिंह	9
ज़ायकेदार अचार	-	तनु मलिक, राकेश गहलोत एवं एकता	10
असिंचित क्षेत्रों में खरीफ फसलों की उत्पादकता - कैसे बढाएं	-	सुरेंद्र कुमार शर्मा, सरिता रानी एवं अमित कुमार	11
कृषि शिक्षा में चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय का योगदान	-	अशोक कुमार, राजेश कुमार एवं सूबे सिंह	20
मानसून पूर्वानुमान और उसका कृषि पर प्रभाव	-	योगेश कुमार, राज सिंह एवं अनिल कुमार	21
नलकूप : भारतीय कृषि की जान	-	नरेंद्र कुमार एवं अरविन्द	22
फलों और सब्जियों का कचरा : संरक्षण	-	कनिका पंवार एवं विजय कुमार	23
टपका सिंचाई प्रणाली में बहाव अवरोधन से बचाव : अम्ल प्रक्रिया द्वारा	-	प्रमोद शर्मा, संजय कुमार एवं नरेंद्र कुमार	24
एकाधिक प्रकार की बुद्धिमता	-	सुमित श्योराण, बिमला ढांडा एवं कृष्णा दुहन	25
अपना पोषण अपने हाथ - पोषण वाटिका : एक आसान उपाय	-	पूनम, अशोक ढिल्लों एवं संतोष रानी	26
हाइड्रोजेल: कम पानी में अधिक उपज	-	श्वेता एवं मनु	28
जागरूक उपभोक्ता - समय की आवश्यकता	-	कुसुम राणा व सुमन मलिक	28
Care of Newborn Calf	-	Swati Ruhil and Vikas Khichar	29
Micro-propagation : A Tissue Culture Approach in Sugarcane	-	Sudhir Sharma, Upender Balyan and Lokesh Yadav	29
Water in Agricultural Development and Food Security	-	Vijay and Sube Singh	31
ग्वार : एक गुणकारी फसल	-	यश पाल सिंह सोलंकी, बी. पी. राणा एवं मीनाक्षी सांगवान	32
स्थाई स्तम्भ : जुलाई मास के कृषि कार्य			**13**

तकनीकी सलाहकार
डॉ. आर. एस. हुड्डा
निदेशक, विस्तार शिक्षा

सह-निदेशक (प्रकाशन)
डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक
डॉ. सुषमा आनंद
सह-निदेशक (हिन्दी)

सुनीता सांगवान
सम्पादक (अंग्रेजी)
प्रकाशन अनुभाग

संकलन
डॉ. सूबे सिंह
सहायक निदेशक (विस्तार शिक्षा)
विस्तार शिक्षा निदेशालय

आवरण एवं सज्जा
राजेश कुमार

लेखकों से अनुरोध : हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। टाईपिंग के लिए कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं haryanakhetihau@gmail.com

तिल की फसल- कम लागत अधिक लाभ

- **सत्यजीत, एस. पी. यादव[1] एवं उमेश कुमार शर्मा**
कृषि विज्ञान केन्द्र, झज्जर
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

तिलहनी फसलों में तिल एक महत्वपूर्ण खरीफ की फसल है। इसकी खेती राज्य में कम उपजाऊ भूमि, बारानी क्षेत्रों में, कतारों में बिजाई न करना, मिश्रित खेती करना, खाद प्रबन्धन, खरपतवार नियन्त्रण तथा पौध संरक्षण की ओर ध्यान न देने से पैदावार कम आती है। तिल का क्षेत्रफल हरियाणा प्रांत में लगभग 3 हज़ार हैक्टेयर है। हरियाणा की औसत पैदावार 400 किलोग्राम प्रति एकड़ है। यह एक कम लागत में अधिक लाभ देने वाली फसल है। इस फसल में निम्न उन्नत तकनीकों को अपनाने से और भी अधिक लाभदायक बनाया जा सकता है।

उन्नत किस्मों का चुनाव

हरियाणा तिल नं. 1 : इस किस्म की ऊंचाई मध्यम, पत्ते गहरे हरे रंग के तथा बीज सफेद व सुड़ौल होते हैं। यह 80-85 दिन में पककर तैयार हो जाती है। यह किस्म पत्ती मरोड़ व फायलोड़ी बीमारियों की प्रतिरोधी है। इसमें तेल की मात्रा 49 प्रतिशत व औसत उपज 2.9 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

हरियाणा तिल नं. 2 : इस किस्म की हरियाणा, पंजाब, जम्मू और हिमाचल प्रदेश (ज़ोन-1) में काश्त करने की सिफारिश की गई है। यह 87 दिनों में पककर तैयार हो जाती है तथा पत्तों का मोजैक वायरस व फायलोड़ी रोग के लिए अवरोधी किस्म है। इसका दाना सफेद होता है व तेल की मात्रा 48.2 प्रतिशत होती है। हरियाणा में इसकी औसत पैदावार 4.0 क्विंटल प्रति एकड़ है।

उत्पादन तकनीक

खेत की तैयारी: अच्छे जल-निकास वाली रेतीली-दोमट मिटट्री में तिल की फसल अच्छी फलती-फूलती है। बिजाई से पहले भूमि की अच्छी तैयारी आवश्यक है। दो या तीन बार जुताई करके ज़मीन तैयार करनी चाहिए तथा प्रत्येक जुताई के बाद सुहागा अवश्य लगाएं।

बिजाई का समय व बीज मात्रा : तिल की अच्छी पैदावार लेने के लिए फसल की बिजाई मानसून की पर्याप्त वर्षा के पश्चात् या बिजाई से पहले खेत की सिंचाई करके जुलाई के प्रथम पखवाड़े में करनी चाहिए। यदि इसकी बिजाई 10-15 जुलाई के बाद की जाए तो फसल में कीड़ों व बीमारियों का प्रकोप कम होता है तथा पैदावार भी अधिक होती है।

बीज उपचार व बिजाई विधि : बीज की मात्रा 1.5 से 2 कि.ग्रा. प्रति एकड़ पर्याप्त रहती है। बिजाई से पहले बीज का उपचार कैप्टान या थाइरम (2 ग्राम प्रति कि. ग्रा. बीज) से करें। इससे जड़ गलन व तना गलन बीमारी से बचाव रहता है। बीज को केरा, पोरा या ड्रिल मशीन से 30 सैं.मी. कतार से कतार के फासले पर 4.0 से 5.0 सैं.मी. पर बिजाई करें।

खाद की मात्रा : बारानी फसल होने के कारण इस फसल को प्राय: खाद देने की अवश्यकता नहीं पड़ती। यदि 10 टन गोबर की खाद प्रति एकड़ बिजाई से 15 दिन पहले डालें तो अच्छा रहता है। कम उपजाऊ एवं हल्की भूमि में 15 किलो ग्राम शुद्व नत्रजन (33 किलो ग्राम यूरिया) प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई से पहले डालें। इस फसल में अधिक खाद देने से पत्तों की वृद्धि ही अधिक होती है।

निराई व गुड़ाई : निराई-गुड़ाई कसोले से या ''व्हील हैण्ड़ हो'' से करके खरपतवारों पर नियंत्रण किया जा सकता है। पौधों की संख्या अधिक हो तो उन्हें 20-25 दिन की अवस्था पर विरला करके पौधे से पौधे की दूरी 15 सैं. मी. रखें।

सिंचाई : आमतौर पर जुलाई में बीजी गई फसल को सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। अगर वर्षा बिल्कुल न हुई हो तो एक सिंचाई फलियां बनते समय अवश्य करें।

कीड़े एवं समन्वित प्रबन्धन

हरा तेला : यह कीड़ा पत्ते में से रस चूसता है और फायलोडी रोग (फलियों के स्थान पर हरी पत्तियों के गुच्छे) फैलाता है। इसकी रोकथाम के लिए 200 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर दो बार, 2 से 3 सप्ताह के अन्तर पर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

तिल की पत्ती लपेट तथा फली बेधक सूण्ड़ी : आक्रमण के शुरू में सूण्ड़ियां पत्तों को लपेट कर खाती हैं जिससे पत्ते गिर जाते हैं तथा बाद में सूण्ड़ियां फलियों में छेद करके अन्दर ही अन्दर खाकर हानि पहुंचाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए 600, 650 तथा 725 ग्राम कार्बेरिल 50 घु. पा. को क्रमश: 200, 220 तथा 240 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 25, 40 व 55 दिन के अन्तराल पर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें।

बीमारियों के लक्षण व रोकथाम

फायलोडी : फलियों की जगह हरी पत्तीयों के गुच्छे बन जाते हैं। यह बीमारी फूल आने पर ही दिखाई देती है। इसकी रोकथाम के लिए अगेती बिजाई न करें। फसल को 15 जुलाई के लगभग बीजें। रोगी पौधों को आरम्भ में ही निकाल कर नष्ट कर दें। कीट नियन्त्रण रोगोर या मैटासिस्टॉक्स से करें।

झुलसा रोग : यह रोग फफूंदी के कारण होता है। पत्तों तथा फलियों पर गहरे-भूरे रंग के दाग पड़ जाते हैं तथा पत्ते झुलस जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए फसल पर मैन्कोज़ेब 800 ग्राम प्रति एकड़ का 250 लीटर पानी में घोल कर 10-15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करें।

जड़ व तना गलन : यह रोग प्राय: पकाई के समय आता है। पौधे की जड़ें गल जाती हैं तथा तना काला पड़ जाता है व पौधे मर जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए बीज का उपचार थाइरम 3 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से करें।

कटाई व गहाई : पत्तियों व तनों का रंग जब पीला पड़ जाए, जो कि फसल पकने की पहचान है, इस समय फसल की कटाई करें, देर करने पर बीज झड़ने से नुकसान हो सकता है। कटाई के बाद बण्ड़लों में बांधकर सीधा रख देना चाहिए। पूरी पैदावार लेने के लिए इन बण्ड़लों की दो बार झड़ाई काफी है।

[1]क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल

गुणों से भरपूर - हरी खाद

- उमा देवी, पवन कुमार एवं धीरज पंघाल
सस्य विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मृदा स्वास्थ्य में गिरावट किसानों की सबसे महत्वपूर्ण समस्या है। इसके कारण ज़मीन बंजर होती जा रही है। रासायनिक उर्वरकों का अनियंत्रित उपयोग मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को खराब कर रहा है। इसलिए इन समस्याओं को दूर करने के लिए जैविक खेती की अवधारणा अस्तित्व में आई। जैविक खेती, जैविक खाद जैसे गोबर की खाद, केंचुआ खाद व हरी खाद आदि पर निर्भर करती है। इसलिए हरी खाद जैविक खेती में उपयोग की जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण खाद में से एक है। हरी खाद भूमि की उर्वरा शक्ति बढाने वाली फसल है और मोटे तौर पर मिट्टी के लाभ के लिए फसलों के रूप में परिभाषित की जा सकती है।

हरी खाद वाली फसलों से ज़मीन में ह्यूमस, कार्बनिक कार्बन, नाइट्रोजन और सूक्ष्मजीव की संख्या वृद्धि में सुधार होता है। हरी खाद उगाने से कई लाभ मिल सकते हैं जैसे हरी खाद देने से मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ जुड़ते हैं। हरी खाद वाली फसलें मिट्टी में जैविक गतिविधि को बढ़ाती हैं। ये फसलें मिट्टी की संरचना में सुधार करती हैं। हरी खाद की फसलें मिट्टी के कटाव को कम करने में मदद करती है। वे पौधों को उपलब्ध पोषक तत्वों की आपूर्ति बढ़ाने में मदद करते हैं। यह भी बताया गया है कि हरी खाद वाली फसलें खरपतवारों को दबाने में, कीट और रोग की समस्याओं को कम करने में व पशु चारा प्रदान करने में मदद करती हैं। हरी खाद जैविक खेती का एक हिस्सा है। अनुमान है कि एक 40-50 दिन की हरी खाद की फसल 80-100 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर तक की आपूर्ति कर सकती है। यहां तक कि अगर इस नाइट्रोजन का आधा भाग भी अगर फसल उपयोग योग्य है, तो एक हरी खाद की फसल 50-60 कि. ग्रा. उर्वरक नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर का विकल्प हो सकती है।

कुछ संभावित हरी खाद वाली फसलें जैसे ढैंचा, सन्हंप, मूंग, बीन, ग्वार आदि खरीफ के मौसम में 42-95 किग्रा नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर प्रदान करती हैं व रबी मौसम में खेसारी, चावल और बरसीम 67-68 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर प्रदान करती हैं। भारत में मुख्य रूप से हरी खाद दो तरह से की जाती है।

(अ) हरी पत्ती खाद : इस विधि में हरी पतियों एवं कोमल शाखाओं को दूसरी जगह से तोड़कर खेत में फैलाकर जुताई द्वारा मिट्टी में दबाया जाता है, मिट्टी में थोड़ी नमी होने पर भी यह सड़ जाती है। यह विधि कम बारिश वाले इलाकों के लिए उपयोगी है।

हरी खाद की स्थानीय विधि : इस विधि में हरी खाद की फसल को उसी खेत में उगाया जाता है, जिसमें इस खाद का प्रयोग करना होता है। यह विधि समुचित वर्षा व सुनिश्चित सिंचाई वाले इलाकों के लिए उपयुक्त है। इस विधि में फसल को फूल आने से पहले वानस्पतिक वृद्धि काल (45 से 50 दिन) में मिट्टी में पलट दिया जाता है। मिश्रित रूप से बोई गई हरी खाद की फसल को उपयुक्त समय पर जुताई द्वारा खेत में दबा दिया जाता है।

खेत में हरी खाद की तकनीक

हरी खाद की फसल से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए निम्न बातें जानना आवश्यक हैं:

(1) बढ़ने का सही समय।

(2) मिट्टी में शामिल करने का सही समय।

(3) अपघटन के लिए आवश्यक समय

हरी खाद की फसल की बुवाई का समय : हरी खाद की फसल की बुवाई का समय अलग-अलग होता है। उपलब्ध स्थानीय परिस्थितियों और संसाधनों के अनुसार आमतौर पर हरी खाद की फसल मानसून की बारिश के तुरंत बाद बोई जाती है। लेकिन, अगर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो, तो हरी खाद की फसल रबी की फसल कटने के बाद अप्रैल और मई के दौरान उगाई जा सकती है। सन्हंप और ढैंचा अप्रैल-मई में बिजाई के लिए उपयुक्त हैं और मुख्य खरीफ फसल के रोपण से पहले जून-जुलाई में ज़मीन में मिला सकते हैं। वर्षा आधारित क्षेत्रों में धान के साथ ईन्टर क्रॉपिंग से 4:1 के पंक्ति अनुपात में ढैंचा बोया जा सकता है।

हरी खाद की फसल मुख्य फसल के साथ : इसमें एक ही समय में मुख्य फसल व हरी खाद उगाना सम्मिलित है। कभी-कभी उनके साथ बोया जाता है या थोड़ा बाद में जब फसलें पहले से ही बढ़ रही हैं। यह विधि हरी खाद और मुख्य फसल के बीच प्रतिस्पर्धा को कम करती है व ज़मीन तैयार करने में अतिरिक्त समय भी नहीं लगता।

हरी खाद की फसल को मिट्टी में मिलाने की अवस्था : विशिष्ट समय पर हरी खाद की फसल अधिकतम नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थ प्रदान करती है। यह विशिष्ट अवस्था तब होती है जब पौधा अपरिपक्व होता है और फूल आना शुरू हो जाता है, जैसा कि हरी खाद का मूल उद्देश्य अधिकतम रसीला हरा पदार्थ प्रदान करना है। फसल वृद्धि की शुरुआती अवधि के दौरान नाइट्रोजन, प्रोटीन, पानी में घुलनशील तत्व अधिकतम होते हैं, जबकि फाइबर, हेमिकसेलुलोज, सेल्युलोज, लिग्निन और सी: एन अनुपात कम होता है। इसलिए, अपरिपक्व पौधों के ऊतक परिपक्व पौधों की तुलना में आमतौर पर अधिक तेज़ी से विघटित होते हैं। 15 से 20 दिन की देरी भी नाइट्रोजन सामग्री को कम व सी : एन अनुपात, फाइबर, हेमिसेलुलोज, सेल्यूलोज, लिग्निन को बढ़ाता है जो मिट्टी के सूक्ष्मजीवों को कार्य करने और विघटित करने के लिए मुश्किल प्रदान करता है।

हरी खाद को दबाने की विधि और गहराई : किसी फसल बोने से पहले हरी खाद की फसल मिट्टी में मिलाई जाती है। हरी खाद को अधिक गहरा नहीं मिलाना चाहिए क्योंकि यह पोषक तत्वों को बहुत गहराई तक दबा देता है। उन्हें बस मिट्टी की सतह के नीचे रखना चाहिए। यहाँ यह विघटित हो जाता है और हरी खाद के अंदर मौजूद पोषक तत्व पौधों को उपलब्ध हो जाते हैं। अपरिपक्व फसल किसी भी गहराई में सड़ सकती है, लेकिन परिपक्व फसल को अधिक गहराई पर दबाया जाना चाहिए। यदि मौसम शुष्क है तो हरी खाद की फसल को नम मौसम की तुलना में अधिक गहराई पर दबा देना चाहिए। अगर मिट्टी में नमी कम है तो बाहरी रूप से पानी की आपूर्ति की जानी चाहिए। उचित अपघटन के लिए हरी खाद की फसल को रेतीली भूमि में अधिक गहराई में और भारी मिट्टी में कम गहराई पर दबाना चाहिए।

हरी खाद को दबाने और अगली फसल की बुवाई के बीच का समय अंतराल : हरी खाद को दबाने और अगली फसल की बुवाई के बीच का समय अंतराल ऐसा होना चाहिए कि हरी खाद की फसल का अपघटन अगली फसल की रोपाई से पहले पूरा होने दें। समय अंतराल निम्नलिखित कारक पर निर्भर करता है

(1) मौसम की स्थिति

(2) दबाई गई हरी सामग्री की प्रकृति।

हरी खाद के रूप में हरी खाद की फसल को दबाने के 35- 45 दिन के बाद फसल बोनी चाहिए क्योंकि पूर्ण अपघटन के लिए फसल में लगभग 4-6 सप्ताह लगते हैं।

सारणी : हरी खाद के लिए उपयुक्त फसलें एवं उनसे प्राप्त होने वाले नाइट्रोजन की मात्रा

फसल का नाम	हरे पदार्थ की मात्रा (टन प्रति हैक्टेयर)	नाइट्रोजन का प्रतिशत	प्राप्त नाइट्रोजन (किग्रा. प्रति है.)
सनई	20 -30	0.43	86 -129
ढैंचा	20 -25	0.42	84 -129
उड़द	10 -12	0.41	41 -49
मूंग	8-10	0.48	38 -48
ग्वार	20-25	0.34	68 -85
लोबिया	15 -18	0.49	74 -88
कुल्थी	8 -10	0.33	26-33

आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक नि:शुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह नि:शुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह नि:शुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

कपास में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण व उनका निवारण

- **पूजा रानी, विकास हुड्डा एवं मनोज कुमार**
कृषि विज्ञान केन्द्र, सदलपुर
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

खरीफ की नकदी फसलों में कपास का महत्वपूर्ण स्थान है। लगभग 6 लाख हैक्टेयर में कपास बोई जाती है। कपास की फसल को उचित बढ़वार एवं पैदावार के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता अधिक होती है। हरियाणा की ज़मीन में पोषक तत्वों के हुए ह्रास के कारण कपास की फसल में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखना स्वाभाविक है। कई बार सिफारिश की गयी मात्रा में उर्वरक डालने के बावजूद पौधों में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई देते हैं। आमतौर पर किसान इन लक्षणों को पहचान नहीं पाता और कीटनाशकों का प्रयोग शुरू कर देता है। अत: किसानों को कपास की फसल में पोषक तत्वों की कमी से दिखाई देने वाले लक्षणों की पहचान होना बहुत आवश्यक है। कपास में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण तथा उनका निवारण इस प्रकार है :

नाइट्रोजन : नाइट्रोजन की कमी से पौधे कमज़ोर, पीले व कम शाखा वाले होते हैं तथा वृद्धि दर कम हो जाती है इसकी कमी पूरी करने के लिए यूरिया डालें अगर टिंडे बनते समय कमी के लक्षण दिखाई दें तो 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का 10 दिन के अंतराल पर दो से तीन छिड़काव करने से कमी दूर की जा सकती है।

फास्फोरस : इसकी कमी से पौधे बौने, कम शाखाओं वाले, पत्तियां छोटी तथा उनका रंग गहरा हरा व बैंगनी हरा दिखाई देता है। इसकी कमी के लक्षण प्राय: जून के अंतिम सप्ताह या जुलाई के प्रथम सप्ताह में दिखाई देते हैं। इसकी कमी डी.ए.पी. डालकर पूरी की जा सकती है। अगर इसकी कमी के लक्षण अगस्त या सितंबर में दिखाई दें तो 2 प्रतिशत डीएपी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

पोटेशियम : पोटेशियम की कमी से नीचे की पत्तियों का रंग पहले हल्का हरा हो जाता है और बाद में पत्तियों की मध्य शिरा का भाग पूरा बैंगनी हो जाता है। जबकि अन्य शिराएं पीली बनी रहती हैं तथा पत्तियां सख्त हो जाती हैं तथा नीचे की तरफ मुड़ जाती हैं। अंत में सारी पती लाल भूरी हो जाती हैं तथा सूख जाती हैं। टिंडे पूरी तरह खिलते नहीं हैं। बिजाई के समय 40 ग्राम प्रति एकड़ म्यूरेट ऑफ पोटाश डालें। अगर टिंडे बनते समय लक्षण दिखाई दें तो 2 प्रतिशत म्यूरेट ऑफ पोटाश का छिड़काव करें।

गंधक : इसकी कमी से ऊपर की नई पत्तियां पीली तथा सफेद पीली हो जाती हैं व इनका आकार घट जाता है। इसकी कमी पूरी करने के लिए डी. ए.पी. की जगह सिंगल सुपर फास्फेट डालें। जिस ज़मीन में इसकी कमी अधिक है वहां 100 किलोग्राम जिप्सम प्रति एकड़ डालकर इसकी कमी को पूरा किया जा सकता है।

ज़िंक : इसकी कमी बिजाई के 3 सप्ताह बाद दिखाई देने लगती है। नीचे की पत्तियों की शिराओं के बीच में पीले धब्बे आ जाते हैं और बाद में कत्थई रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। (शेष पृष्ठ 6 पर)

कृषि में रासायनिक पदार्थों का बढ़ता प्रयोग : सूक्ष्मजीवों एवं प्राकृतिक स्थिरता पर प्रभाव

- **सीमा सांगवान, सुशीला सिंह[1] एवं मीना**
सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

प्रकृति में अनेक खाद्य श्रृंखलाएं हैं ये विभिन्न प्रकार के उत्पादकों, उपभोक्ताओं (प्राथमिक एवं द्वितीय) तथा अपघटकों से मिल कर बनती हैं। ये श्रृंखलाएं खाद्य पदार्थों व खाद्य ऊर्जा के क्रमबद्ध प्रवाह का निर्धारण करती हैं। अनेक खाद्य श्रृंखलाएं मिलकर खाद्य जाल का निर्माण करती है जिनकी कड़ियां, एक दूसरे को पोषण प्रदान करती हैं। प्राकृतिक असंतुलन या किसी अन्य कारण से यदि एक भी कड़ी प्रभावित होती है तो उसका असर सम्पूर्ण परिस्थितिकी तंत्र पर पड़ता है। सूक्ष्मजीव इन्हीं खाद्य श्रृंखलाओं का एक अहम् हिस्सा होते हैं। ये एक सक्षम उत्पादक, सजग उपभोक्ता होने के साथ-साथ सबसे मज़बूत अपघटक हैं। इनकी अपघटन की क्षमता ही पोषण चक्रों के सुचारू रुप से संचालन में अहम् भूमिका अदा करती है। बैक्टीरिया फफूंदी व प्रजीवगण (प्रोटोजोआ) मृत अवशेषों को गलाने व पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण का कार्य करते हुए ये कहना अतिश्योक्ति न होगा कि पृथ्वी पर जीवन तभी तक संभव है जब तक प्रकृति में सूक्ष्मजीवों का अस्तित्व सुरक्षित है।

सूक्ष्मजीवों का संतुलित विकास सब से अधिक मृदा में संभव है। यह सूक्ष्मजीवों का प्रिय स्थान है क्योंकि मृदा में सही मात्रा में पोषक तत्व, लगभग स्थिर नमी, तापमान एवं पी एच मान (अम्लता या क्षारकता) होता है। मृदा में सूक्ष्मजीवों व अन्य जीव जन्तुओं की संख्या, पृथ्वी पर मनुष्यों की संख्या से लगभग 20 गुणा अधिक होती है। प्रतिग्राम मृदा में 1 अरब से लेकर 100 अरब तक केवल जीवाणु पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त लगभग 10 लाख फफूंदी के तंतु एवं 10 हज़ार से 1 लाख प्रजीवगण पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त हज़ारों की संख्या में सूक्ष्म संधिपाद, सूत्रकृमि, पादप परजीवी एवं केंचुआ इत्यादि भी पाये जाते हैं। ये सभी जीव, मृदा की सेहत एवं कृषि की स्थिरता बनाये रखने के लिए अति आवश्यक हैं।

मानव निर्मित व उपयोगी कुछ प्रक्रियाएं इन सूक्ष्मजीवों के लिए घातक सिद्ध होती हैं। इसका सबसे बड़ा उदाहरण है कृषि में होने वाले हानिकारक रसायन। रासायनिक पोषक तत्व एवं कीटनाशक, आधुनिक षि का अभिन्न अंग हैं नि:सन्देह हरित क्रांति की सफलता का एक बड़ा श्रेय इन्हीं घटकों को जाता है। रासायनिक पोषक तत्वों के प्रयोग से हम खाद्य निर्भरता प्राप्त कर पाए हैं। पोषक तत्वों की सही मात्रा एवं कीटनाशकों का आवश्यकता के अनुरूप छिड़काव अति आवश्यक माना जाता है। फसलों की उपज वृद्धि व बीमारियों से बचाव के लिए किसान भी इन रसायनों का प्रयोग दिल खोलकर करते हैं परन्तु जागरूकता की कमी के कारण व इन रसायनों के हानिकारक प्रभावों से अनभिज्ञता के चलते, इनका आवश्यकता से अधिक उपयोग बे रोकटोक किया जा रहा है।

हानिकारक कीटों, जीव-जन्तुओं व खरपतवार आदि को नष्ट करने के लिए, दुनियाभर में प्रतिवर्ष लगभग 3×10^9 कि.ग्रा. कीटनाशक इस्तेमाल किये जाते हैं। विडम्बना यह है कि इन कीटनाशकों का लगभग 0.1 प्रतिशत ही निर्धारित जीव तक पहुंच पाता है। शेष रसायन, मृदा, जल व वायुमण्डल के प्रदूषण का कारण बनते हैं।

ये हानिकारक रसायन मृदा परिस्थितिकी तन्त्र के असंतुलन का कारण बनते जा रहे हैं। मृदा में पाए जाने वाले सूक्ष्मजीवों एवं अन्य जीव-जन्तुओं पर इनका बुरा प्रभाव पड़ता है। जिससे वे सभी अपने निर्धारित कार्य (जैसे पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण व अवशेषों को गलाने-सड़ाने का कार्य) सुचारू रूप से नहीं कर पाते। अत: इससे परिस्थितिकी तन्त्र व परिस्थितिकी अवरोधित होते हैं। अन्तत: ये विषैले पदार्थ भूमि की उपजाऊ शक्ति को धीरे-धीरे नष्ट कर, उसे बंजर बना देते हैं। यही नहीं, ये हानिकारक पदार्थ खाद्य श्रृंखला में अवशोषित होकर मनुष्य व जीव-जन्तुओं तक पहुंच जाते हैं। इन रसायनों का या इनके स्थिर गौण उत्पादों का मृदा में पाए जाने वाले कार्बनिक पदार्थों व पेड़-पौधों पर अधिशोषण व अवशोषण हो जाता है। जिससे ये और भी तेज़ी से खाद्य श्रृंखला में सम्मिलित हो जाते हैं। मनुष्यों व जानवरों के वसीय ऊत्तकों में इनका जैवआवर्धीकरण होता रहता है एवं अत्यधिक संचय हो जाने पर ये विषैले रसायन जानलेवा बीमारियों का कारण बनते हैं। बढ़ता हुआ कर्क रोग एवं बांझपन इत्यादि इन्हीं रसायनों का परिणाम है। एक बार मृदा में विलय के पश्चात इन रसायनों का दुष्प्रभाव सालों-साल देखने को मिलता है। अत: इनके अनावश्यक प्रयोग पर रोकथाम अब अति आवश्यक हो गई है।

फसलों के उत्पादन को बिना घटाए, कृषि में सस्ते व पर्यावरण अनुकूल विकल्पों का प्रयोग आज की ज्वलनशील मांग बन चुका है। विषैले पदार्थों की मात्रा कम करके, जैविक खेती के विकल्पों की ओर रूझान बढ़ाकर हम प्राकृतिक एवं कृषि संबन्धी स्थिरता प्राप्त कर सकते हैं। जीवाणु खाद, केंचुआ खाद, बायोगैस स्लरी, जैविक खाद, फसल चक्र एवं कीटों व बीमारी फैलाने वाले सूक्ष्मजीवों का जैव नियन्त्रण इत्यादि प्रणालियां अपनाकर हम विषमुक्त खेती की ओर अग्रसर हो सकते हैं। ये प्राकृतिक एवं सस्ते विकल्प यथासंभव अपनाकर हम भूमि को रासायनिक विष से मुक्त कर सकते हैं। आरम्भ में इन विकल्पों का प्रभाव कदाचित कम दिखाई दे परन्तु समय के साथ ये भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ाकर, निश्चित रूप से आर्थिक तौर पर भी सहायक सिद्ध होंगे।

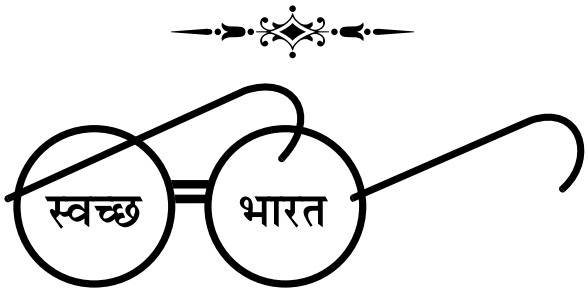

एक कदम स्वच्छता की ओर

[1]रसायन विज्ञान विभाग

मूंगफली की फसल : बीमारियों तथा कीड़ों से बचाव

- **नरेंद्र सिंह यादव, बलबीर सिंह[1] एवं एस. पी. यादव**
क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

खरीफ तिलहनी फसलों में मूंगफली का हरियाणा प्रदेश मे एक महत्वपूर्ण स्थान है। देश की 991 किलो ग्राम प्रति एकड़ औसत पैदावार के मुकाबले में हरियाणा की औसत पैदावार 1000 किलो ग्राम प्रति एकड़ है। इसकी उपज बढ़ाने के लिए इसका क्षेत्रफल बढ़ाने की बजाए इसकी उत्पादकता बढ़नी आवश्यक है ताकि तेलों की बढती हुई मांग पूरी की जा सके। अन्य तकनीकी जानकारी के अलावा इस फसल में लगने वाली बीमारियों तथा कीड़ों की उचित समय पर देखभाल करने से इस फसल की औसत पैदावार और अधिक बढ़ाई जा सकती है।

बीमारियों के लक्षण एवं बचाव

बीज गलन व कॉलर गलन (तना गलन): यह बीमारी भूमि में रह रहे फफूंद द्वारा फैलती है। यह बीमारी रेतीली, शुष्क भूमि तथा अधिक तापमान पर बहुत हानि पहुंचाती है। प्रारम्भिक अवस्था में इस बीमारी का प्रकोप मूंगफली के कोमल तने पर होता है। बीज गलन में उगने से पहले ही बीज भूमि में गल जाता है जिससे जमाव कम होता है। कॉलर गलन रोग जमाव के तुरंत बाद ही आरम्भ हो जाता है। इसमें पौधों का भूमि के पास वाला भाग पिचक जाता है तथा पौधा ऊपर से सूखना शुरू हो जाता है। अगर ऐसे पौधे को उखाड़ा जाए तब जड़ आमतौर पर टूटकर भूमि में रह जाती है। तने और बीज के इस भयंकर गलन रोग की उत्पत्ति एक फफूंद द्वारा होती है जो काला पाऊडर के रूप में तने पर भूमि के पास वाले भाग पर होती है।

बचाव : जिन मूंगफली के खेतों में यह बीमारी अधिक आती है वहां कम से कम तीन साल का फसल चक्र अपनाएं तथा स्वस्थ व अच्छा बीज लें एवं बिजाई से पहले थाइरम या कैप्टान 3 ग्राम की दर से बीज उपचार करें।

टिक्का रोग (पौध धब्बा रोग) : यह बीमारी फसल के जमाव के 6 सप्ताह बाद शुरू होती है। प्रारम्भिक अवस्था में ये धब्बे हल्के भूरे, फिर गहरे भूरे और बाद में काले हो जाते हैं। सभी धब्बों के चारों ओर लगभग एक से डेढ़ मि.मी. चौड़ाई का गोलाकार पीला घेरा बन जाता है। इन धब्बों से ग्रस्त कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं। जिससे पत्तों द्वारा बनाए जाने वाले आहार का नुकसान होता है। अधिक प्रकोप होने पर पत्ते झड़ जाते हैं तथा उपज का पकाव जल्दी हो जाता है तथा पैदावार में कमी आ जाती है।

बचाव : इस बीमारी से ग्रसित फसल के अवशेषों को एकत्रित करके नष्ट कर देना चाहिए तथा रोग ग्रसित फसल पर 400 ग्राम मैंकोज़ैब या 200 ग्राम बाविस्टीन दवा को 200 लीटर पानी मे घोल बनाकर प्रति एकड़ के हिसाब से 10-15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

कीड़ों से बचाव

दीमक :- यह बहुभक्षी कीट खरीफ व रबी की अन्य फसलों के अलावा मूंगफली को भी भारी नुकसान पहुंचाता है। यह कीट ज़मीन के अंदर रहता है और इसका प्रकोप अधिकतर बारानी क्षेत्रों में ही होता है। फसल के उगने से कटाई तक यह फसल की जड़ों व तनों को काटकर नष्ट करता रहता है, इससे पौधे पीले पड़ने लगते हैं और कुछ दिन बाद सूखकर मर जाते हैं। यदि इनके तनों व फली को चीरकर देखा जाए तो उनके अंदर मिट्टी भरी होती है। इस कीड़े का प्रकोप खेत के छोटे-छोटे चकत्तों में मिलता है परंतु कभी-कभी यह सारे खेत को ही चट कर जाता है।

रोकथाम :- गोबर की कच्ची खाद खेतों में न डालें, समय पर सिंचाई, निराई-गुड़ाई करें व खरपतवार निकालें। बिजाई से कुछ समय पहले 15 मि.ली. क्लोरोपाईरीफॉस 20 ई. सी. या क्विनाल्फॉस 25 ई.सी. से प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीज उपचार करें।

सफेद लट :- यह दीमक की तरह बहुभक्षी कीट है। इस कीट की गिंडार सफेद रंग की होती है जो पूरी विकसित होने पर 2.5 से 3.5 सैं.मी. तक लंबी होती है। ज़मीन से बाहर निकालने पर यह कीट अंग्रेजी के 'सी' अक्षर के आकार की होती है। यह कीट पौधों की मूल जड़ को खा जाता है तथा ज़मीन के भीतर एक मीटर तक इधर-उधर आ-जा सकता है। आक्रमण ग्रस्त पौधों का रंग धीरे-धीरे पीला पड़ने लगता है। पौधों को उखाड़कर देखा जाए तो जड़ पर कटे हुये निशान मिलते हैं जैसे कि तेज़ धार वाले चाकू से काटा गया हो। इसका प्रकोप भी सारे खेत में एक सा नहीं मिलता।

समन्वित रोकथाम :- खेत के आस-पास यदि नीम, कीकर या खेजड़ी के पेड़ हों तो उनके पत्तों को बरसात के दिनों में काट देना चाहिए क्योंकि इस कीट के प्रौढ़ पहली बरसात के बाद इन पेड़ों के पत्ते खाते हैं। बाद में आसपास की जमीन में जाकर यह प्रौढ़ अंडे देते हैं जिनमें लटें निकलकर फसल को नुकसान पहुंचाती हैं।

प्रौढ़ भूण्डों को मारने के लिये पहली, दूसरी व तीसरी वर्षा होने के बाद उसी दिन या एक दिन बाद खेतों में खड़े पेड़ों पर 0.04 प्रतिशत मोनोक्रोटोफॉस 36 एस. एल. या 0.05 प्रतिशत क्विनलफॉस 23 ई.सी. के हिसाब से छिड़काव करें।

दीमक के लिये बताया गया बीजोपचार करना भी आवश्यक है ताकि जड़ों में सफेद लट न लग पाये।

चेपा :- इस कीट के बच्चे व प्रौढ़ गहरे भूरे या हल्के काले रंग के होते हैं जो पौधों से रस चूस लेते हैं। जिसके कारण पौधे मुरझा जाते हैं। इस कीट का आक्रमण कभी-कभी मानसून के बाद होता है।

रोकथाम :- इस कीट का आक्रमण होने पर 200 मि. ली. मैलाथियान 50 ई. सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें।

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, बावल

फलदार पौधों को गर्मी व लू से बचाएं

- **सुलेमान मोहम्मद एवं विरेन्द्र सिंह**
क्षेत्रीय अनुसन्धान केंद्र (बागवानी), बुड़ीया, यमुनानगर
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गर्मी के मौसम में जब गर्म व शुष्क हवाएं चलती हैं तो पौधों की पत्तियों एवं ज़मीन की सतह से पानी का वाष्पीकरण बड़ी तेज़ी से होता है। इन गर्म व शुष्क हवाओं तथा लू के कारण ज़मीन में तथा पौधों पर पानी की कमी के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। तेज़ लू या आंधी तूफान से कमजोर टहनियां व पौधे टूट कर गिर जाते हैं व कई बार पूरे के पूरे पौधे बिल्कुल उखड़ भी जाते हैं। अत: फलदार पौधों की गर्मी व लू से रक्षा निम्नलिखित तरीकों से करें:

हवा रोक बाड़: जिस खेत में बाग़ लगा हुआ हो उसकी उत्तर-पश्चिम दिशाओं पर एक मिश्रित पंक्ति के रूप में 3-4 किस्मों के अलग-अलग ऊंचाई वाले पेड़ लगायें। अधिक ऊंचाई वाले पेड़ जैसे शीशम, सफेदा, देसी आम आदि व कम ऊंचाई वाले जैसे जमोआ, शहतूत, करोंदा आदि बाड़ के लिए अच्छे पेड़ हैं। बरसात के दिनों में खेत की उत्तर-पश्चिम सीमाओं के साथ-साथ दस फुट की दूरी पर अधिक ऊंचाई वाले पौधों की दो कतारें लगायें ताकि सभी प्रकार के पौधे मिश्रित रूप से लग जाएं।

जन्तर या ढैंचा लगाना : फरवरी-मार्च के महीनों में फलदार पौधों के चारों ओर ढैंचा के बीज बो दिए जाते हैं जो जून जुलाई के महीनों तक काफी बड़े हो जाते हैं तथा बौनी किस्म के फलदार पौधों को गर्मी व लू से बचाते हैं।

छप्पर बनाना : आमतौर पर फल उत्पादक हवा रोधक बाड़ तैयार नहीं करते, यदि करते भी हैं तो उसी समय जब वे खेत में फलदार पौधे लगाना शुरू करते हैं। परन्तु इस समय यह बाड़ छोटे पौधों (नए) की रक्षा नहीं कर सकती। इसलिए ऐसे बागों में हर एक नए पौधे के उत्तर-पश्चिम में सरकंडे की पत्तियों से या धान की पराली से छट्टियों के साथ छप्पर बना दें और मई-जून के महीने में पौधों के साथ लगा दें।

पलावर क्रिया (मल्चिंग)- गर्मी के दिनों में ज़मीन में नमी बनाये रखने के लिए गुड़ाई करने के बाद ज़मीन को घास-फूस या धान की पराली या लकड़ी के बुरादे या पॉलीथीन शीट से ढक देते हैं। इस क्रिया को पलावर क्रिया कहते हैं। इस तरह ढकने से ज़मीन लू व सूर्य की किरणों के सीधे सम्पर्क में नहीं आती जिससे वाष्पीकरण बहुत कम होता है तथा ज़मीन में नमी लम्बे समय तक बनी रहती है। पलावर क्रिया (मल्चिंग) से खरपतवारों का नियंत्रण भी होता है. अगर पलावर क्रिया पॉलीथीन शीट के अलावा फूस या धान की पराली या लकड़ी के बुरादे से की गई हो तो दीमक का प्रकोप बढ़ सकता है, अत: दीमक की रोकथाम के लिए पलावर क्रिया से पहले क्लोरपाईरिफोस दवा को सिफारिश अनुसार रेत में मिलाकर पूरे खेत में छिडकें एवं सिंचाई करें।

सिंचाई :- ज़्यादा गर्मी व लू के दिनों में पानी का वाष्पीकरण अधिक होता है इसलिए छोटे पौधों को 3-4 दिन के अन्तराल पर तथा बड़े पौधों को 7-8 दिन के अन्तराल पर पानी देते रहना चाहिए।

तनों पर सफेदी करना-पौधे के मुख्य तने पर चूने की गहरी पुताई करें ताकि तने द्वारा गर्मी को ग्रहण करने की शक्ति कम हो जाये। यदि 100 लीटर चूने के पानी में 300 ग्राम ब्लाइटोक्स मिलाकर पुताई करें तो तने पर बीमारियाँ भी कम लगेंगी।

नाज़ुक पौधे बाग के बीच लगाना : ज्यादा गर्मी व लू से अधिक प्रभावित होने वाले फलदार पौधे जैसे लीची, पपीता, लोकाट आदि को बाग़ के बीच में लगायें ताकि ये नाजुक पौधे लू से कम प्रभावित हों।

पौधे को स्वस्थ व मज़बूत बनाना : अगर पौधा अच्छी बढवार वाला व मज़बूत होगा तो उसमें लू व ज्यादा गर्मी को सहने की शक्ति अधिक होगी। इसलिए सिफारिश अनुसार पौधों में खाद, पानी, कांट-छांट, निराई-गोड़ाई तथा कीड़े व बीमारियों की रोकथाम समय-समय पर करते रहें ताकि पौधे स्वस्थ व मज़बूत बने रहें और गर्मी व लू से अधिक प्रभावित न हों।

(पृष्ठ 3 का शेष)

पत्तियां छोटी व मोटी होकर ऊपर की तरफ मुड़कर कप की आकृति ले लेती हैं। पौधे झाड़ीनुमा दिखाई देते हैं। इसकी कमी 0.5 प्रतिशत ज़िंक सल्फेट को 2 प्रतिशत यूरिया के साथ मिलाकर 10 दिन के अंतराल पर दो छिड़काव करने से पूरी की जा सकती है।

लोहा : इसकी कमी के लक्षण नई पत्तियों पर दिखाई देते हैं। शिराओं के बीच से पत्तियों का रंग उड़ जाता है तथा पूरी पत्ती सफेद दिखाई देने लगती है। इसकी कमी को 0.1 प्रतिशत फैरस सल्फेट का 10 दिन के अंतराल पर दो-तीन बार छिड़काव करने से पूरा किया जा सकता है।

मैंगनीज़ : इसकी कमी से पौधे की बढ़वार रुक जाती है तथा पौधे पर पत्तियां कम और छोटी होती हैं। फूल देरी से आते हैं तथा गिर जाते हैं तथा टिड्डे नहीं बनते। इसके लक्षण सबसे पहले बीच वाली पत्तियों पर दिखाई देते हैं। पत्ती के मध्य हरा रंग हल्का हो जाता है तथा शिराएं हरी दिखाई देती हैं। इसकी कमी को एक किलोग्राम मैंगनीज़ सल्फेट को 200 लीटर पानी में मिलाकर 10 दिन के अंतराल पर दो से तीन छिड़काव करने से पूरा किया जा सकता है।

आवश्यक सूचना

''**हरियाणा खेती**'' मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक (प्रकाशन)

लोबिया : एक पौष्टिक चारे वाली – दलहनी फसल

- **सतपाल, डी.एस. फोगाट एवं दलविंदर पाल सिंह**
चारा अनुभाग, आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

लोबिया, गर्मी व खरीफ मौसम की फलीदार, पौष्टिक एवं स्वादिष्ट चारे वाली फसल है। इसकी खेती प्राय: सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इसे हरे चारे के अलावा दलहन, हरी फली (सब्जी) व हरी खाद के रूप में अकेले अथवा मिश्रित फसल के तौर पर उगाया जाता है। अगर इसे ज्वार, बाजरा तथा मक्का के साथ उगाएं तो इन फसलों के चारे की गुणवत्ता बढ़ जाती है। गर्मियों में इसे दुधारू पशुओं की दूध देने की क्षमता बढ़ाने के लिए अवश्य खिलाना चाहिए।

पोषकता : लोबिया के हरे चारे में पौष्टिकता की दृष्टि से प्रोटीन 18 से 24 प्रतिशत, फाइबर 34 से 37 प्रतिशत और लिग्निन 8 से 10 प्रतिशत पाए जाते हैं जो अन्य चारों की अपेक्षा इसकी पाचन क्रिया, स्वादिष्टता एवं पशु स्वास्थ्य को बनाए रखने में अधिक उपयोगी होते हैं। लोबिया के हरे चारे को अकेले खिलाने की बजाए सूखी तूड़ी या ज्वार, बाजरा, मक्की के हरे चारे या इनकी कड़वी के साथ मिलाकर खिलाएं। लोबिया से हरे चारे की अधिक पैदावार लेने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :

किस्म का चुनाव

सी एस -88 : यह लोबिया की सीधी बढ़ने वाली किस्म है जिसके पत्ते गहरे हरे रंग के तथा चौड़े होते हैं। यह किस्म विभिन्न रोगों से मुक्त है। विशेषकर पीले मोजैक विषाणु रोग के लिए। इस किस्म की बिजाई सिंचित एवं कम सिंचाई वाले क्षेत्रों में गर्मी तथा खरीफ के मौसम में की जा सकती है। इसका हरा चारा लगभग 55-60 दिनों में कटाई योग्य हो जाता है। इसके हरे चारे की पैदावार लगभग 140-150 क्विंटल प्रति एकड़ है। यदि फसल बीज के लिए लेनी हो तो लोबिया की बिजाई का सही समय मध्य-जुलाई से अगस्त का प्रथम सप्ताह है।

मिट्टी व खेत की तैयारी : लोबिया की काश्त के लिए दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है परन्तु रेतीली दोमट मिट्टी में भी इसे आसानी से उगाया जा सकता है। ज़मीन समतल एवं अच्छे जल निकास वाली होनी चाहिए।

बिजाई का समय : लोबिया की बुवाई मध्य-मार्च से लेकर जुलाई अन्त तक कर सकते हैं। गर्मियों में सबसे अच्छा समय मध्य-मार्च से लेकर मई का पहला सप्ताह है, जिससे इसका हरा चारा चारे की कमी वाले समय में उपलब्ध हो जाता है। खरीफ में इसकी बिजाई मध्य-जून से जुलाई अन्त तक कर सकते हैं।

बीज की मात्रा व बिजाई का ढंग : पौधों की उचित संख्या व बढ़वार के लिए 16-20 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ उचित रहता है। पंक्ति से पंक्ति का फासला 30 सैं.मी. रखकर पोरे अथवा ड्रिल द्वारा बिजाई करें। लेकिन जब मिश्रित फसल बोई जाए तो लोबिया के बीज की एक तिहाई मात्रा प्रयोग करें। लोबिया के लिए सिफारिश किए गए राइजोबियम कल्चर से बीज का उपचार करके बिजाई करें।

उर्वरक : दलहनी फसल होने के कारण, लोबिया में नाइट्रोजन की अधिक आवश्यकता नहीं होती। अच्छी बढ़वार के लिए 10 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें। बिजाई से पहले सिंचित इलाकों में 25 किलोग्राम फास्फोरस तथा बारानी क्षेत्रों में 12 किलोग्राम फास्फोरस पोरा या ड्रिल से डालें। मिश्रित खेती में उर्वरक फसल की सिफारिश के अनुपात में ही डालें।

निराई-गुड़ाई : गर्मी में बोई गई फसल में एक निराई-गुड़ाई पहली सिंचाई देने के बात बत्तर आने पर करें। मानसून की वर्षा पर बोई गई फसल में एक गुड़ाई बिजाई के लगभग 25 दिन बाद करें।

सिंचाई और जल निकास : मार्च-अप्रैल में बोई गई फसल में पहली सिंचाई बिजाई के 20-25 दिन बाद तथा मई में बोई गई फसल में पहली सिंचाई बिजाई के 15-20 दिन बाद करें। आगे की सिंचाइयां 15-20 दिन के अन्तराल पर करें। इस तरह कुल मिलाकर 3-4 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। बरसात के मौसम में बीजी गई फसल में आमतौर पर सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। जल-निकास का उचित प्रबन्ध करना आवश्यक है।

कीड़ों से बचाव : सूखे मौसम में लोबिया पर हरा तेला आक्रमण करता है। इसकी रोकथाम के लिए 200 मिलीलीटर मैलाथियॉन 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। लेकिन यह विशेष ध्यान रखें, कि छिड़काव के 7-10 दिन बाद तक इस फसल का हरा चारा पशुओं को न खिलाएं।

कटाई : लोबिया से दो कटाई ली जा सकती हैं-पहली कटाई बिजाई के 55 दिन बाद व दूसरी कटाई फसल में फूल आने पर। लोबिया की हरे चारे के लिए कटाई 50 प्रतिशत फूल आने से लेकर 50 प्रतिशत फलियां बनने तक पूरी कर लेनी चाहिए। अन्यथा इसके बाद इसका तना सख्त व मोटा हो जाता है और चारे की पौष्टिकता व स्वादिष्टता दोनों ही प्रभावित होती हैं।

लोबिया आधारित फसल-चक्र

(अ) सिंचित क्षेत्रों के लिए : हरियाणा के जिन क्षेत्रों में पानी की कमी नहीं है वहां लोबिया आधारित निम्न फसलचक्र अपनाएं।

1. **संकर हाथी घास + लोबिया (गर्मियों में) + लोबिया (खरीफ)-बरसीम + चाइनीज़ सरसों**

संकर हाथी घास एक बहुवर्षीय फसल है। इसे मध्य फरवरी से मध्य मार्च में जड़ों व तनों द्वारा लगाया जाता है। इसके लिए हाथी घास की 3500 जड़ों की प्रति एकड़ आवश्यकता पड़ती है। हाथी घास के लिए कतारों का फासला दो मीटर तथा पौधों का फासला 60 सैं.मी. रखना चाहिए। अप्रैल के अन्त में जब बरसीम से चारा मिलना बन्द हो जाता है तो उस समय हाथी घास चारा देना आरम्भ कर देती है। गर्मियों के महीनों (मई-जून) में इसकी पौष्टिकता बढ़ाने के लिए इसकी कतारों के बीच में लोबिया की बिजाई करनी चाहिए। इसके लिए लोबिया के 16 किलो प्रति एकड़ बीज की मात्रा की आवश्यकता पड़ती है। अक्तूबर के महीने में हाथी घास की आखिरी कटाई लेकर इसकी कतारों के बीच में बरसीम+चाइनीज़ सरसों की बिजाई कर लेनी चाहिए। सर्दियों के मौसम में जब संकर हाथी घास चारा नहीं देती तब बरसीम की फसल से चारा मिलना शुरू हो जाता है। मार्च में संकर हाथी घास का फुटान शुरू हो जाता है। उसके बाद अप्रैल में चारा मिलना शुरू हो जाता है। इस फसलचक्र से पूरे साल में 720-800 क्विंटल प्रति एकड़ हरा चारा प्राप्त होता है।

(शेष पृष्ठ 8 पर)

क्षारीय एवं लवणीय मृदा की पहचान एवं सुधार

- **राकेश कुमार, मनोज कुमार शर्मा एवं विकास**
मृदा विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

देश की बढ़ती हुई जनसंख्या की पोषण समस्या भारतीय कृषि के लिए एक बड़ी चुनौती है। इसलिए क्षारीय एवं लवणीय भूमि को सुधारकर अधिक फसल उत्पादन लेना आवश्यक है।

क्षारीय मृदा की पहचान

- इस प्रकार की मृदा में वर्षा का जल लंबे समय तक ठहरा रहता है।
- खड़े हुए पानी का रंग काला भूरा, गंदला व साबुनी होता है।
- आमतौर पर भूमिगत जल मीठा होता है तथा कई जगहों पर अधिक अवशिष्ट सोडियम कार्बोनेट (आर.एस.सी.) की समस्या होती है।
- कुछ गहराई पर कैल्शियम कार्बोनेट की कंकरियों का पाया जाना।

लवणीय मृदा की पहचान

- इस प्रकार की मृदा जल को कम समय में सोख लेती है।
- खड़े हुए पानी का रंग साफ होता है।
- भूमिगत जल अधिकतर लवणीय होता है।
- कुछ गहराई पर जिप्सम भी पाया जाता है।
- भूमि पर सफेद रंग की लवण पापड़ी का जमाव भी पाया जाता है।
- प्रयोगशाला में मिट्टी की जांच से ही लवणीय एवं क्षारीय मृदा का सही वर्गीकरण किया जा सकता है।

तालिका :- लवणीय एवं क्षारीय मृदा का वर्गीकरण

मृदा का प्रकार	पी एच मान	विद्युत चालकता (डे.से./मी)	सोडियम अधिशोषण अनुपात (एस. ए. आर.)
लवणीय मृदा	8.2 से कम	4.0 से अधिक	15 से कम
क्षारीय मृदा	8.2 या अधिक	4.0 से कम	15 या अधिक

लवणीय एवं क्षारीय मृदा सुधार के तरीके :-

जिप्सम का प्रयोग : इसके तहत क्षारीय भूमि सुधारने के लिए रासायनिक भूमि सुधारक पदार्थों जैसे जिप्सम, पाइराइट, फॉस्फोजिप्सम एवं गंधक का अम्ल आदि का प्रयोग किया जाता है किन्तु जिप्सम बाज़ार में आसानी से उपलब्ध हो जाता है तथा सस्ता व अत्यंत प्रभावी होने के कारण अधिक लोकप्रिय है। क्षारीय भूमि सुधार के लिए यह आवश्यक है कि प्रयोग किये जाने वाले जिप्सम की शुद्धता 70 प्रतिशत से कम न हो। यदि मृदा का पीएच मान अधिक है तो जिप्सम का प्रयोग सीधे खेत में ही करें। क्षारीय भूमि सुधार से पूर्व खेत से मिट्टी का नमूना लेकर प्रयोगशाला में उसकी जांच करा लें और भूमि सुधार के लिए आवश्यक जिप्सम की मात्रा की जानकारी प्राप्त कर लें। मृदा के पीएच मान के अनुसार 10 से 15 टन प्रति हैक्टेयर जिप्सम की आवश्यकता पड़ती है।

जैविक सुधारक : गन्ना मिल का प्रेसमड़, शीरा, धान की पुआल, भूसी, गृह की राख, जलकुम्भी कम्पोस्ट खाद, गोबर की खाद, कच्चा गोबर इत्यादि कार्बनिक पदार्थों का प्रयोग भी क्षारीय भूमि सुधार के लिए किया जाता है। जैविक पदार्थ का उपयोग करने से भूमि की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा में परिवर्तन होने के फलस्वरुप क्षारीय भूमि का सुधार होने लगता है। यह विधि प्राकृतिक होने के कारण सस्ती है किन्तु सुधार में अधिक समय लगता है। लवण ग्रस्त मृदा में कृषि-वानिकी के तहत विभिन्न प्रकार के वृक्षों जैसे : बबूल, गुह बबूल, विलायती बबूल/जंगली कीकर, राम बबूल, जंगली सारु एवं सफेदा आदि वृक्ष प्रजातियों को फसल के साथ लवणीय मृदा में आसानी से लगाया जा सकता है। जलमग्न व लवणग्रस्त भूमि में जैविक कार्बन की मात्रा कम होती है तथा इन्हें सुधारने के लिए एक कारगर नीति है। सफेदे का जैविक-जलनिकास के लिए कतार में रोपण कर जल निकास के साथ-साथ कार्बन का स्थिरीकरण भी किया जा सकता है।

उपसतही जल विकास तकनीक : सुधार के लिए उपसतही जलनिकास तकनीक का विकास किया गया है। भूमिगत जलनिकास तकनीक के अर्न्तगत छिद्र युक्त पाईप भूमि सतह से 1.-2.0 मीटर गहराई तथा 60-65 मीटर के अन्तराल पर खाई खोदने वाली (ट्रेन्चर) मशीन द्वारा बिछाए जाते हैं। सभी समानांतर नालियों को एक संग्राहक नाली द्वारा जोड़कर प्राकृतिक ढलान के अनुरुप 3-4 मीटर गहरे कुएँ में पहुँचा दिया जाता है। इस कुएँ से पानी को पम्प द्वारा निकाल कर खुली जलनिकास नाली में डाल दिया जाता है। इस प्रकार भूमिगत जल को वांछित स्तर पर स्थिर किया जा सकता है तथा घुलनशील लवण प्रभावित क्षेत्र से बाहर निकाले जा सकते हैं।

(पृष्ठ 8 का शेष)

2. मक्का + लोबिया-ज्वार + लोबिया-जई (दो कटाई)

इस फसल चक्र की सभी फसलें एक वर्षीय हैं। मक्का + लोबिया की बिजाई (2:1 अनुपात में) मार्च अन्त से अप्रैल माह के अन्त तक करें। मक्का व लोबिया की बिजाई के लिए बीज की मात्रा क्रमश: 16 व 6 किलो प्रति एकड़ प्रयोग करें। ज्वार+लोबिया की बिजाई मध्य जून में करें। जिसके लिए 14 किलो ज्वार तथा 6 किलो लोबिया का बीज पर्याप्त है। जई की बिजाई मध्य अक्तूबर के आस-पास करें जिसके लिए 32-40 किलो बीज की प्रति एकड़ आवश्यकता पड़ेगी। इस फसलचक्र से 440-520 क्विंटल हरा चारा प्रति एकड़ प्राप्त किया जा सकता है।

(ब) सीमित सिंचाई वाले क्षेत्रों के लिए : हरियाणा के जिन भागों में पानी की कमी है पूर्ण वर्ष हरा चारा प्राप्त करने के लिए निम्न लोबिया आधारित फसलचक्र अपनाना चाहिए।

बाजरा + लोबिया - ज्वार + लोबिया - जई

यह एक वर्षीय फसलचक्र है। गर्मियों के महीनों (मार्च अन्त से - अप्रैल) में बाजरा की 30 सैं.मी. की दूरी पर बिजाई कर दें। इसमें 2 : 1 अनुपात में लोबिया भी मिलाना चाहिए। इससे चारे की पौष्टिकता बढ़ जाती है। बाजरा व लोबिया के बीजों को उपयुक्त अनुपात में मिलाकर कतारों में बो दिया जाता है। यह उचित रहेगा यदि बिजाई इस प्रकार करें कि बाजरा की दो कतार न लगाकर फिर एक कतार लोबिया की लगायें। इससे पैदावार अधिक होती है। इसी प्रकार खरीफ में ज्वार तथा लोबिया भी 2:1 अनुपात में बोना चाहिए। अक्तूबर व नवम्बर के महीने में जई की बिजाई कर दी जाती है। इस फसलचक्र से पूरे साल में 360-440 क्विंटल प्रति एकड़ हरा चारा प्राप्त हो जाता है।

एलोवेरा : एक चमत्कारिक पौधा

✎ **राजेश लाठर, वंदना एवं गुरनाम सिंह**
कृषि विज्ञान केन्द्र, पंचकूला
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हर्बल और कॉस्मेटिक उत्पाद और दवा कंपनियों की बढ़ती मांग के साथ एलोवेरा की खेती का व्यावसायिक महत्त्व काफी बढ़ गया है। इस खेती का मुख्य लाभ यह है कि इसके लिए कम पानी और रखरखाव की आवश्यकता होती है। उत्पादन की लागत कम है और एलोवेरा खेती में अधिक शुद्ध लाभ है। उच्च औषधीय गुण और एलोवेरा की बढ़ी हुई मांग के साथ यह दुनिया भर में बहुत लोकप्रिय है जिसे चमत्कारी पौधे के रूप में भी जाना जाता है जो मानव को प्रकृति का उपहार है और प्रकृति का टॉनिक भी कहा जाता है।इसमें विटामिन और खनिजों के साथ एंटीबायोटिक और एंटीफंगल गुण होते हैं जो एलोवेरा को एक सुपरफूड बनाता है।एलोवेरा एक बहुत ही हार्डी पौधा है जिसे सूखे क्षेत्र में भी उगाया जा सकता है।यह पौधा मूल रूप से अफ्रीका महाद्वीप से है।

प्रमुख उत्पादक राज्य : एलोवेरा 36 टन प्रति हैक्टेयर की उत्पादकता और41.616 हजार टन उत्पादन के साथ लगभग 1156 हैक्टेयर क्षेत्र में लगाया गया है। एलोवेरा राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, तमिल नाडू, महाराष्ट्र और केरला राज्य में सीमित है।

एलोवेरा के स्वास्थ्य लाभ : दुनिया भर के शोधकर्ताओं ने शोध किया है कि 320 से अधिक बड़ी बीमारियों के इलाज में एलोवेरा की महत्वपूर्ण भूमिका है। एलोवेरा को अब ''अमेरिकन फूड एंड ड्रग ब्यूरो ई.ई.सी. एंड इस्लामिक सील'' द्वारा इसके महान मूल्य के रूप में मान्यता दी गई है।

- एलोवेरा एंटीबायोटिक, एंटी माइक्रोबियल, एंटी बैक्टीरियल, एंटी सेप्टिक, कीटाणुनाशक, एंटी फंगल और एंटी वायरल है
- एलोवेरामूत्रसंबंधित समस्याओं, अल्सर और पिंपल्स के उपचार में बहुत अच्छा है।
- एलोवेरा विटामिन और खनिजों का अच्छा स्रोत है।
- एलोवेरा में अमीनो एसिड और फैटी एसिड की मात्रा अधिक होती है।
- एलोवेरा पाचन में मदद करता है।
- एलोवेरा डिटॉक्सिफिकेशन प्रोसेस में मदद करता है।
- एलोवेरा प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ाने में मदद करता है।
- एलोवेरा कब्ज़ से राहत दिलाने में मदद करता है।
- एलोवेरा, मुँहासे, निशान और जलन को ठीक करने में मदद करता है।
- एलोवेरा तनाव के स्तर को कम करता है।
- एलोवेरा ब्लड कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में मदद करता है।
- यह ब्लड शूगर के स्तर को नियंत्रित करता है।
- यह दिल को स्वस्थ रखने में मदद करता है।
- एलोवेरा गठिया के दर्द में मदद करता है।

एलोवेरा की विभिन्न किस्में जो व्यापार में बहुत लोकप्रिय हैं : दुनिया में एलोवेरा की 300 ज्ञात प्रजातियां हैं, जिनमें से एलो बारबडेंसिस मिलर को 95 प्रतिशत औषधीय गुणों के साथ सबसे अच्छा प्रकार माना जाता है। अन्य किस्में एलो परफोलियाटा, एलो चिर्नेसिस, एलो लिटोरालिस, एलो वल्गेरिस,एलो एबिसिनिका आदि हैं।

मिट्टी और जलवायु : एलोवेरा गर्म मौसम की फसल है। इसकी खेती आमतौर पर शुष्क क्षेत्र में न्यूनतम वर्षा और गर्म आर्द्र क्षेत्र में सफलता पूर्वक की जाती है। यह पौधा अत्यधिक ठंड की स्थिति के प्रति बहुत संवेदनशील है। शुष्क क्षेत्र और कम पानी की ठहराव वाली मिट्टी के साथ भूमि का उपयुक्त चयन आवश्यक है। इसकी खेती के लिए भूमि को ठीक स्थिति तक अच्छी तरह से जुताई करके तैयार किया जाना चाहिए। मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए, अंतिम जुताई के दौरान लगभग 15-20 टन अच्छी तरह से सड़े हुए गोबर की खाद डालें। इसकी खेती रेतीली से लेकर दोमट मिट्टी तक विभिन्न प्रकार की मिट्टी पर की जा सकती है हालाँकि, इसकी खेती के लिए रेतीली मिट्टी सबसे अच्छी होती है। अच्छी काली मिट्टी भी एलोवेरा की खेती के उत्तम विकास के लिए बहुत उपयुक्त है। भूमि चयन में हमें उन ज़मीनों का चयन करना चाहिए जो ज़मीनी स्तर से थोड़ी ऊंचाई पर हों।यह जल भराव की स्थिति के प्रति संवेदनशील है इसलिए खेत में जल निकासी व्यवस्था होनी चाहिए। मिट्टी का पीएच 8.5 होना चाहिए।

एलोवेरा की वंश-वृद्धि और रोपण : बेहतर विकास के लिए एलोवेरा के पौधे जुलाई-अगस्त में लगाए जाते हैं। सिंचित स्थिति में, पौधों को सर्दियों के महीनों में छोड़कर पूरे वर्ष लगाया जा सकता है। नाली और डोली 40 सैं.मी. की दूरी पर होनी चाहिए।छोटा पौधा 40 सैं.मी. की दूरी पर लगाया जाना चाहिए। रोपण घनत्व पचास से पचपन हज़ार प्रति हेक्टेयर होगा और दूरी 40×45 सैं.मी. होनी चाहिए। एलोवेरा, राइजोम कटिंग और छोटे पौधे से प्रोपगैटेड किया जाता है, इसकी वंश-वृद्धि के लिए भूमिगत राइजोम को खोदा जाता है, राइजोम को 5-5.5 सैं.मी. काटा जाता है जिसमें न्यूनतम दो से तीन गांठें होनी चाहिएं। अंकुरित होने के बाद इसे बेड या विशेष कंटेनर में लगाया जाता है। इसी प्रकार छोटे पौधे को मूल पौधे से अलग किया जाता है और 50 × 45 सैं.मी. की दूरी पर लगाया जाना चाहिए और राइजोम कटिंग की लंबाई और छोटे पौधे की लंबाई 12-15 सैं.मी. रेंज में होनी चाहिए। यह सलाह दी जाती है कि पौधे का दो तिहाई हिस्सा ज़मीन के अंदर होना चाहिए।छोटे पौधे के प्रसार के मामले में, मदर प्लांट को नुकसान पहुँचाए बिना मध्यम आकार के छोटे पौधों को सावधानी से खोदा जाता है। राइजोम के मामले में, कटाई के बाद भूमिगत राइजोम को खोदें और उन पर दो या तीन गांठों के साथ लगभग 6 सैं.मी. लंबी कटिंग करें। उन्हें तैयार रेत बेड पर रखें। एक बार अंकुरित होने के बाद, उनकी मुख्य खेत में रोपाई करें।

सिंचाई : छोटे पौधे लगाने के तुरंत बाद सिंचाई देनी चाहिए। गर्मी के मौसम में सिंचाई करने के परिणामस्वरूप अच्छी पैदावार होगी। बरसात के मौसम में, खेत में जल भराव से बचें क्योंकि यह फसल पानी के ठहराव के प्रति संवेदनशील है। उचित रोपण के बाद सिंचाई मिट्टी की नमी के अनुसार करनी चाहिए।एलोवेरा की खेती में अंत: कृषि क्रिया के रूप में, मिट्टी चढ़ाने का काम किया जाना चाहिए। नियमित अंतराल पर निराई-गुड़ाई करनी चाहिए।

खाद और उर्वरक : एलोवेरा में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग बहुत ही कम है। भूमि की तैयारी के दौरान 15-20 टन प्रति हैक्टेयर अच्छी तरह से सड़े गोबर की खाद का उपयोग करें। इसके बाद हर साल गोबर की खाद का उपयोग किया जाना चाहिए। प्रारंभिक खुराक के रूप में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश जैसे उर्वरकों को 50 : 50 : 50 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर के अनुपात में उपयोग करना चाहिए।

रोग व कीट नियंत्रण : पौधे को नुकसान से बचाने के लिए कीट नियंत्रण भी बहुत आवश्यक कदम है। मीली बग एलोवेरा की फसल के लिए प्रमुख खतरा है। साथ ही पत्तियों का धब्बा रोग एक बड़ी बीमारी है। एलोवेरा में कीट नियंत्रण के लिए मिथाइल पैराथियान 0.1 प्रतिशत या मैलाथियान 50 प्रतिशत 0.2 प्रतिशत से उचित छिड़काव करें। पत्ती धब्बा रोग से बचाव के लिए 0.2 प्रतिशत डाइथेन एम-45 का छिड़काव साप्ताहिक अंतराल पर किया जाना चाहिए।

एलोवेरा की कटाई : एलोवेरा की पहली कटाई लगभग 8 महीनों में की जा सकती है। इसकी कटाई दांतीं या चाकू से करनी चाहिए क्योंकि मिट्टी में बचे टूटे हुए प्रकंद फिर से उग आएंगे इसलिए एलोवेरा के पौधे की कटाई करते समय विशेष ध्यान रखना चाहिए। दूसरे वर्ष से एलोवेरा की फसल की व्यावसायिक पैदावार होगी और 5 साल तक चलेगी। कटाई सुबह या शाम के समय की जानी चाहिए। एक वर्ष में तीन कटाई की जा सकती हैं। यह फसल श्रम प्रधान फसल है। ताज़ी पत्तियों की कटाई के बाद पत्तियों को सुखाने के लिए देखभाल की जानी चाहिए। किसी भी प्रकार की फफूंद की वृद्धि को रोकने के लिए पत्तियों को सूखा और ठंडा रखा जाना चाहिए। कटाई की गई पत्तियों को ढेर या भंडारण करने में पक्के फर्श का उपयोग करने की सलाह दी जाती है।

एलोवेरा की उपज : एलोवेरा की खेती से पहले साल में कोई लाभ नहीं होता क्योंकि एक छोटे पौधे को पहली कटाई के लिए 12-15 महीने का समय चाहिए होता है और उसके बाद एक साल में 3-4 बार फसल ली जा सकती है। 3 या 4 ताज़े पत्ते लिए जा सकते हैं। एलोवेरा की व्यावसायिक उपज दूसरे से पांचवें वर्ष तक प्राप्त की जा सकती है। प्रति हैक्टेयर भूमि पर 40 से 45 टन मोटी पत्तियों की औसत उपज प्राप्त की जा सकती है।

एलोवेरा का विपणन : लक्षित ग्राहक और विपणन रणनीति हर व्यवसाय का पहला कदम होना चाहिए। यहाँ इस एलोवेरा की खेती में हमारा लक्षित बाज़ार हर्बल, फार्मा और कॉस्मेटिक कंपनियां हैं। एलोवेरा की लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है जो बाज़ार में इसकी मांग को बढ़ाती है ताकि हमारे उत्पाद को बाज़ार में लाने के लिए हमें सीधे हर्बल, फार्मा या कॉस्मेटिक कंपनियों जैसे कि पतंजलि या हिमालय और कुछ अन्य हर्बल कंपनियों से संपर्क करना चाहिए।

ज़ायकेदार अचार

- **तनु मलिक, राकेश गहलोत एवं एकता**
खाद्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अचार आंशिक रूप से एक किण्वित (लैक्टिक एसिड किण्वन) पदार्थ है जो कि विभिन्न फलों व सब्जियों से नमक के माध्यम से तैयार किया जाता है। इसमें सिरका, मसाले, शक्कर एवं खाद्य तेल आवश्यकतानुसार मिलाए जाते हैं। अचार एक अत्यन्त ही लोकप्रिय पदार्थ है जो कि भारत के सभी वर्गो के परिवारों द्वारा निरन्तर उपयोग किया जाता है। यहां के अचार विदेशों में भी भेजे जाते हैं। अचार हमारे दैनिक भोजन का विशेष अंग बन चुका है। इसके प्रयोग से अच्छी भूख लगती है। इससे पाचन शक्ति भी तीव्र होती है।

मिला जुला मीठा अचार

सामग्री	**मात्रा**
गाजर के टुकड़े	350 ग्राम
शलगम के टुकड़े	350 ग्राम
गोभी के टुकड़े	300 ग्राम
गुड़	200 ग्राम
प्याज़	250 ग्राम
अदरक	50 ग्राम
लहसुन	10 ग्राम
राई पाऊडर	10 ग्राम
लाल मिर्च पाऊडर	10 ग्राम
गर्म मसाला	10 ग्राम
काली मिर्च पाऊडर	10 ग्राम
नमक	45 ग्राम
हल्दी	20 ग्राम
सरसों का तेल	20 ग्राम
ग्लेशियल एसिटिक एसिड/सिरका	5 मि.ली./100 मि.ली.

विधि :

1. सब्जियों को अच्छी तरह से धोकर आवश्यकतानुसार छीलें व टुकड़े कर लें। इन्हें 2-5 मिनट तक पानी में उबाल कर मुलायम कर लें और कपड़े पर डालकर आधे घण्टे के लिए सुखा लें।
2. थोड़ा सरसों का तेल गर्म करें और उसमें प्याज़, अदरक व लहसुन भून लें। इसमें राई भी डाल दें। बर्तन आग से हटा दें और गर्म मसाले एवं नमक के अतिरिक्त अन्य सारी सामग्री मिला दें।
3. सब्जियों व गुड़ के गाढ़े घोल को भी अच्छी तरह मिला दें। अब गर्म मसाला व नमक मिलाकर सिरका भी मिला दें। इसे मर्तबान में भरकर रख दें।

नींबू का मीठा अचार

सामग्री	**मात्रा**
नींबू	1 कि.ग्रा.

साधारण नमक	20 ग्राम
काला नमक	20 ग्राम
सेंधा नमक	20 ग्राम
जीरा	25 ग्राम
अजवायन	50 ग्राम
लाल मिर्च	10 ग्राम
काली मिर्च	10 ग्राम
गर्म मसाला	10 ग्राम
चीनी	350 ग्राम

विधि :

1. नींबू को धोकर साफ कपड़े से पोंछ लें। इनको चार फांकों में इस तरह काटें कि ये नीचे वाले सिरे से जुड़े रहें।
2. सारे मसालों को दरदरा पीस कर चीनी में अच्छी तरह से मिलाकर नींबुओं में अच्छी तरह से भरकर कांच के मर्तबान में रखते जाएं।
3. बचे हुए मसालों को निंबुओं के ऊपर डाल दें।
4. अब मर्तबान को कपड़े से ढ़क कर धूप में दो सप्ताह के लिए रख दें।
5. दो से तीन सप्ताह में यह अचार खाने योग्य हो जाएगा।

आंवले का अचार

समग्री	**मात्रा**
आंवला	1 कि. ग्राम
सरसों का तेल	200 ग्राम
नमक	100 ग्राम
लाल मिर्च	10 ग्राम
काली मिर्च	10 ग्राम
हल्दी	20 ग्राम
कलौंजी	10 ग्राम
मेथी (मोटी पिसी हुई)	50 ग्राम
राई	100 ग्राम
सौंफ	50 ग्राम
गर्म मसाला	10 ग्राम

विधि :

1. भूरे पके हुए साफ-सुथरे आंवले लें और उन्हें पानी में अच्छी तरह धो लें।
2. इन्हें 6 से 8 मिनट तक पानी में उबालें ताकि ये कुछ नर्म हो जाएं। नर्म किए हुए फलों से फांकें गुठली से अलग कर लें।
3. एक बर्तन में सभी मसाले व सरसों के तेल को मिलाएं।
4. इस मिश्रण में नर्म किए हुए फल के टुकड़े डालकर अच्छी तरह मिलाएं।
5. तैयार अचार को शीशे के मर्तबान में भरकर सील बंद करें। 4 से 5 दिन तक धूप में रख छोड़ें व कभी-कभी इसे हिलाते रहें। अचार सप्ताह भर में खाने योग्य हो जाएगा।

असिंचित क्षेत्रों में खरीफ फसलों की उत्पादकता - कैसे बढाएं

- **सुरेंद्र कुमार शर्मा, सरिता रानी एवं अमित कुमार**
सस्य विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हमारे देश में कृषि के विकास के बावजूद अब भी लगभग 60 प्रतिशत कृषि क्षेत्र असिंचित है तथा भारतीय अर्थव्यवस्था काफी हद तक मानसून पर निर्भर करती है। हरियाणा प्रांत के भी लगभग 20 प्रतिशत भाग में खेती पूर्णत: वर्षा पर आधारित है। बाजरा, मूंग व ग्वार असिंचित क्षेत्रों में खरीफ मौसम की प्रमुख फसलें हैं। मुख्य असिंचित भाग (87 प्रतिशत) दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्रों के अंतर्गत आता है जिसमें मुख्यत: हिसार, भिवानी, चरखी दादरी, महेंद्रगढ़, रेवाड़ी, गुरुग्राम, मेवात, झज्जर, सिरसा, फतेहाबाद व जीन्द जिलों का कुछ भाग आता है। इन क्षेत्रों में कम वर्षा (250-500 मि.मी.) होती है जिसकी 80 से 85 प्रतिशत वर्षा मानसून पर निर्भर करती है। भूमि में नमी का सही ढंग से उपयोग न करना व वैज्ञानिक ढंग से खेती न करना आदि असिंचित क्षेत्रों की मुख्य समस्याएं हैं। फसलों व किस्मों का उपयुक्त चयन न होना, वर्षा जल का उचित संरक्षण न करना, पौधों की उपयुक्त संख्या का न होना, खरपतवारों को पनपने देना, कीट व बीमारी पर नियंत्रण न करना व पोषक तत्वों का उपयोग सही ढंग से न करना आदि कारणों से असिंचित क्षेत्रों में खरीफ फसलों की पैदावार कम होती है। इसके अतिरिक्त बदलते हुए मौसम में वर्षा की कुल मात्रा व वर्षा के दिनों की संख्या भी बदलती जा रही है।

सस्य विज्ञान विभाग के अंतर्गत बारानी खेती अनुभाग असिंचित क्षेत्रों में पाई जाने वाली समस्याओं को आधार मानकर कार्य कर रहा है व इन समस्याओं पर काबू पाने के लिए काफी सिफारिशें व विधियां भी विकसित की गई हैं। इससे खरीफ फसलों की पैदावार में बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है व किसानों को भी लाभ मिल रहा है। इस प्रकार असिंचित क्षेत्रों में खरीफ फसलों की उत्पादकता बढाने हेतु निम्नलिखित सस्य क्रियाओं को अपनाने पर बल देना चाहिए ताकि अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके।

समुचित जल संरक्षण : वर्षा के पानी का समुचित संरक्षण ही असिंचित क्षेत्रों की सफलता की कुंजी है। अधिकतर असिंचित क्षेत्रों में खेत ऊंचे-नीचे पाए जाते हैं। अत: सबसे पहले खेत को समतल कर लेना चाहिए। जिन खेतों में ढलान अधिक हो, उन्हें छोटे-छोटे हिस्सों में विभाजित करके उनके चारों तरफ मेडबंदी कर लेनी चाहिए ताकि वर्षा का पानी खेत से बहकर बाहर न जाए बल्कि उसका भूमि में यथावत संरक्षण हो जाए। वर्षा के पानी को अधिक मात्रा में रोकने के लिए खेतों में ढलान के विपरीत मेड़बंदी करनी चाहिए। खेत की हद एवं मोटी मेढ़ों पर सरकंडे लगाने से मेड़ें ज्यों की त्यों बनी रहती हैं। ग्रीष्म ऋतु में खेतों में प्रत्येक तीन वर्ष में एक बार गहरी जुताई करने से मिट्टी की जल शोषण शक्ति बढ़ती है। खरीफ फसलों की बिजाई से पहले दो बार देसी हल या हैरो से जुताई मानसून की आरंभ की वर्षा में कर लेनी चाहिए।

उपयुक्त किस्मों का चयन : खरीफ फसलों की उपयुक्त किस्मों का चयन असिंचित क्षेत्रों में पैदावार बढ़ाने में सहायक है। इस प्रकार सही किस्म का चयन समय रहते कर लेना चाहिए। बाजरा की शीघ्र पकने वाली संकर किस्में जैसे एच एच बी 67 (संशोधित), एच एच बी 197, एच एच बी 216, एच एच बी 226, एच एच बी 234 व एच एच बी 272 बिजाई के लिए उत्तम पाई गई हैं। ग्वार के लिए एच जी 365, एच जी 563 व एच जी 2-20 किस्में उपयुक्त हैं। मूंग की विकसित किस्मों में सत्या, मुस्कान, बसंती व एम एच 421 बिजाई हेतु उत्तम हैं। उड़द के लिए टी 9 व यू एच 1 उपयुक्त किस्में हैं।

खेत की तैयारी : खेत को तैयार करने के लिए हैरो की सहायता से एक या दो बार गहरी जुताई करके सुहागा लगाना चाहिए ताकि खेत भुरभुरा व समतल हो।

बिजाई का उपयुक्त समय : बिजाई का उपयुक्त समय किसी भी फसल की पैदावार बढ़ाने में सहायक है। अत: खरीफ फसलों की बिजाई मानसून शुरू होने पर ही करनी चाहिए। यदि किसी वर्ष के जून के महीने में 25 से 30 मिलीमीटर वर्षा हो जाए तो बाजरा की बिजाई अवश्य कर देनी चाहिए ।

बीज की मात्रा : बीज की सही मात्रा का प्रयोग भी खरीफ फसलों की पैदावार बढ़ाने में सहायक है। इसके लिए बाजरा में 1.5 से 2.0 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ व ग्वार/मूंग/उड़द में 6 से 8 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ के हिसाब से प्रयोग करना चाहिए।

बीज का उपचार : बीज को उपचारित करके बीजने से हमेशा अच्छी पैदावार मिलती है। बाजरा में प्रति एकड़ बीज को 100 मिलीलीटर बायोमिक्स से उपचारित करना चाहिए। दलहनी फसलों के बीज को राइजोबियम व पी. एस. बी. कल्चर से उपचारित करना चाहिए। ये टीके चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार के माइक्रोबायोलॉजी विभाग एवं किसान सेवा केंद्र से प्राप्त किए जा सकते हैं। कल्चर के साथ दी गई हिदायतों के अनुसार ही कल्चर का सही ढंग से प्रयोग करना चाहिए।

कल्चर के साथ ही ग्वार में बैक्टीरियल ब्लाइट की रोकथाम हेतु 6 लीटर पानी में 6 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन को घोल लें व इस घोल में 6 किलोग्राम ग्वार का बीज 25 से 30 मिनट तक भिगोएं व बाद में 30 से 40 मिनट बीज को छाया में सुखाकर बिजाई कर देनी चाहिए।

बिजाई का तरीका : पूर्व से पश्चिम दिशा में पंक्तियों में 45 सैंटीमीटर के फासले पर फसलों की बिजाई करनी चाहिए। इससे बीजों के अच्छे जमाव एवं खरपतवार नियंत्रण में मदद मिलती है।

पौधों की उपयुक्त संख्या : किसी भी फसल की पैदावार पौधों की संख्या पर निर्भर करती है। बाजरा में उपयुक्त पौधों की संख्या से पैदावार बढ़ती है। इसके लिए रीजर सीडर द्वारा बिजाई करने से सफलता मिली है। बाजरे की बिजाई के तुरंत बाद यदि वर्षा हो जाती है तो ज़मीन पर पपड़ी बनने की संभावना बहुत अधिक हो जाती है तथा यह पौधों की संख्या को प्रभावित करती है। रीजर सीडर के प्रयोग से इस समस्या पर काफी हद तक काबू पाया गया है। सावनी के मौसम में अधिक बारिश होने से इस यंत्र द्वारा बनी नाली जल निकास का कार्य करती है तथा पौधों को मरने से बचाया जा सकता है।

उचित पोषक तत्वों का प्रयोग : असिंचित क्षेत्रों में अधिकतर किसान भाई उचित पोषक तत्वों का प्रयोग नहीं करते, जिससे पैदावार काफी कम मिलती है, जबकि इन क्षेत्रों में नमी के साथ-साथ पोषक तत्वों की भी कमी पाई जाती है। पोषक तत्वों का प्रयोग हमेशा मृदा जांच के आधार पर ही करना चाहिए। बाजरा में 16 किलोग्राम नाइट्रोजन, 8 किलोग्राम फास्फोरस व 3 वर्ष में एक बार 10 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ डालना चाहिए। ग्वार व अन्य दाल वाली फसलों में 8 किलोग्राम नाइट्रोजन, 16 किलोग्राम फास्फोरस व 10 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ की दर से डालना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण : खरपतवार न केवल फसल से बढोत्तरी व स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं बल्कि फसलों के हिस्से के जल व पोषक तत्वों का भी अवशोषण करते हैं। खरपतवार, मृदा नमी को वाष्पोत्सर्जन करके उड़ा देते हैं। प्राय: देखा गया है कि असिंचित क्षेत्रों में किसान खरपतवारों को बढ़ने देते हैं जिससे वे फसलों को मिलने वाले मुख्य पोषक तत्वों व नमी को ग्रहण कर लेते हैं, जिससे पैदावार कम मिलती है। किसान का उद्देश्य खरपतवारों को चारे की तरह प्रयोग करना रहता है, जो कि अवैज्ञानिक विधि है। अत: समय पर खरपतवार नियंत्रण अति आवश्यक है। इसके लिए पहिए वाला कसौला व ब्लेड हो का प्रयोग करना चाहिए ताकि खरपतवार नियंत्रण के साथ-साथ अच्छी नमी का संरक्षण भी हो सके।

पौध संरक्षण : शुष्क क्षेत्रों में सावनी फसलों पर प्राय: कीटों व बीमारियों का प्रकोप होता रहता है। अत: इन फसलों को कीटों व बीमारियों से बचाने के लिए समय-समय पर पौध संरक्षण करना अति आवश्यक है ताकि अधिक से अधिक पैदावार मिल सके।

कटाई : बाजरा व मूंग सितम्बर के महीने में पक कर तैयार हो जाता है। दरांती की सहायता से इन्हें काटें व खेत में सुखाकर दानों को निकाल लें। ग्वार की फसल की कटाई उस समय करें जब इसकी पतियां पीली पड़ कर झड़ जाएं तथा फलियों का रंग भूसे जैसा हो जाए। फसल पकने के तुरन्त बाद काट लें ताकि बीज नीचे न गिरें।

लेखकों से अनुरोध

हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। लेख में अंग्रज़ी शब्दों का प्रयोग न करें। टाईपिंग के लिए **कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें**। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं :

haryanakhetihau@gmail.com

जुलाई मास के कृषि कार्य

फसलों में

बाजरा

संकर बाजरे की किस्में, एच एच बी 50, एच एच बी 60, एच एच बी 94, एच एच बी 67 (संशोधित), एच एच बी 117, एच एच बी 146, एच एच बी 197, एच एच बी 216, एच एच बी 223 व एच एच बी 226, एच एच बी 234, एच एच बी 272, एच एच बी 299 या कम्पोजिट किस्में, एच सी 10 व एच सी 20 बोएं। संकर बाजरे का बीज हर साल नया ही लेकर बोएं। बिजाई के लिए जुलाई का प्रथम पखवाड़ा सबसे उत्तम समय है परंतु बारानी इलाकों में मानसून की पहली वर्षा होने पर ही बिजाई करें। खेत को 2 या 3 बार जोतकर फौरन सुहागा लगाकर अच्छी तरह तैयार करें ताकि घासफूस न रहे। बारानी क्षेत्रों में वर्षा से पहले खेत के चारों तरफ खूब मजबूत डोलें बनाएं ताकि खेत में पानी जमा हो जाए जो आगामी फसल के काम आएगा। एक एकड़ के लिए 1.5 से 2 किलोग्राम बीज चाहिए। खेत में सही उगाव के लिए बिजाई खूडों में इस तरह करें कि बीज के ऊपर 2.0 से 3.0 सैं.मी. से ज्यादा मिट्टी न पड़े। दो खूडों का फासला 45 सैं.मी. रखें। वर्षा के मौसम में मेड़ों पर बिजाई करना अच्छा होता है। इस तरीके से बिजाई के लिए विश्वविद्यालय के शुष्क खेती अनुसंधान केन्द्र द्वारा निर्मित मेड़ों पर बीजने वाले हल का प्रयोग करें। आम उपजाऊ व सिंचाई की सुविधा वाली भूमि में प्रति एकड़ 62.5 किलोग्राम नाइट्रोजन (135 कि.ग्रा. यूरिया), 25 कि.ग्रा. फास्फोरस (150 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट डाली जानी चाहिए। आधी नाइट्रोजन बिजाई के समय ड्रिल करें व शेष दो बार दें-एक छंटाई के समय व दूसरी सिट्टे बनते समय। असिंचित बाजरे में 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया) व 8 कि.ग्रा. फास्फोरस (50 कि.ग्रा. एस एस पी) प्रति एकड़ बिजाई के समय ड्रिल करें। सिंचित बाजरा में फास्फोरस व जिंक सल्फेट बिजाई के समय पोरें।

चेपा या अरगट रोग से बचाव हेतु बीज को 10 प्रतिशत नमक के घोल (10 लीटर पानी में 1 किलोग्राम नमक) में डुबो लें और तैरते हुए पिण्डों व अन्य पदार्थों को बाहर निकाल कर जला दें। नीचे बैठे हुए बीज को साफ पानी में 3-4 बार धोकर सुखा लें और 4 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीज के मिश्रण से बीजोपचार करके बिजाई करें। यदि बीज पहले से उपचारित न हो तो डाऊनी मिल्ड्यू (जोगिया या हरे बालों वाला रोग) की शुरुआती रोकथाम के लिए बीज को मैटालेक्सिल 35 प्रतिशत से 6 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करें। बाजरे की बिजाई के 3 और 5 सप्ताह बाद निराई-गुड़ाई करें। खरपतवारों की रोकथाम रसायनों द्वारा भी की जा सकती है। बिजाई के तुरंत बाद 400 ग्राम एट्राजीन (50 प्रतिशत घु. पा.) प्रति एकड़ 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें। यदि बिजाई के तुरन्त बाद एट्राजीन का प्रयोग न कर सकें तो बिजाई के बाद 10-15 दिन के बीच में भी उतनी ही मात्रा प्रयोग कर सकते हैं। ज्योंही खेत में कोढिया या डाऊनी मिल्ड्यू दिखाई दे प्रभावित पौधे उखाड़ कर नष्ट कर दें और वहां स्वस्थ पौध रोप दें ताकि खेत में पौधों की संख्या पूरी बनी रहे। सफेद लट के नियंत्रण के लिए विश्वविद्यालय की सिफारिश के अनुसार मानसून की वर्षा होते ही गांवों में अभियान चलाएं।

पछेती दशा में बाजरे की रोपाई करने के लिए जुलाई माह के पहले सप्ताह में नर्सरी में क्यारियों में बिजाई करें। नर्सरी के लिए क्यारियां ऐसी जगह बनाएं जहां वर्षा के न होने पर भी सिंचाई के लिए पानी का साधन हो। वर्षा की हालत में बीज छिटक कर तथा सूखी अवस्था में तंग कतारों में बोएं। नर्सरी में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। खेत में रोपाई के लिए लगभग तीन हफ्ते में पौध तैयार हो जाती है।

मक्का

संकर मक्का की एच एच एम-1, एच एच एम-2, एच एम-4, एच एम-5, एच एम-10, एच एम-11, एच क्यू पी एम 1, एच क्यू पी एम 5, एच क्यू पी एम 4 किस्में ही बीजें। इनकी बिजाई कतारों में 75 सैं.मी. की दूरी पर 20 जुलाई तक पूरी कर लें। बिजाई के 10 दिन बाद फालतू पौधे निकाल कर पौधे से पौधे की दूरी 20 सैं.मी. रखें। बीज की गहराई 3 से 5 सैं.मी. हो। साधारणतया 8.0 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ बिजाई के लिए काफी होता है। मक्की में खरपतवारों को कल्टीवेटर, व्हील हैंड या खुरपे/कसोले द्वारा निराई करके या खरपतवारनाशक दवाइयों से नष्ट किया जा सकता है। बिजाई के तुरन्त बाद 400-600 ग्राम एट्राजीन (50 प्रतिशत (घु.पा.) प्रति एकड़ 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें। मक्की में सभी तरह के खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए टैम्बोट्रायोन

लेखक :

- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- अनिल गोदारा, विभागाध्यक्ष (बागवानी)
- डी. एस. दुहन, सहायक वैज्ञानिक (सब्जी विज्ञान)
- तरुण वर्मा, जिला विस्तार विशेषज्ञ (कीट विज्ञान)
- रोहतास कुमार, सहायक वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह बिढान, सहायक प्राध्यापक (पशु उत्पादन प्रबन्धन)
- लीलावती, प्राध्यापिका (सूक्ष्मजीव विज्ञान)
- राजेश दहिया, सहायक प्राध्यापिका (गृह विज्ञान)
- सूबे सिंह, सहायक निदेशक (विस्तार शिक्षा)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

(लोडिस 34.4 प्रतिशत) का 115 मिली. तैयार शुद्ध मिश्रण+400 मि.ली. चिपचिपे पदार्थ को 200 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 10-15 दिन बाद या खरपतवार की 2-3 पत्ती की अवस्था पर प्रति एकड़ छिड़कें। 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (43 कि.ग्रा. यूरिया), 24 कि.ग्रा. फास्फोरस (150 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट), 24 कि.ग्रा. पोटाश (40 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश), 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ बिजाई पर पोरें। 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (43 कि.ग्रा. यूरिया)/एकड़ पौधों के घुटने तक बड़ा होने पर व इतना ही झंडे आने से कुछ पहले दें।

धान

धान की आई आर-64, एच के आर-46, एच के आर-47, पी आर-106, जया, एच के आर-120, एच के आर-126, एच के आर-127 व हरियाणा संकर धान-1 की रोपाई 7 जुलाई तक पूरी कर लें। कम अवधि वाली किस्म गोविन्द व एच के आर -48 की रोपाई जुलाई अन्त तक कर सकते हैं। धान की अन्य किस्में, लंबी बासमती जैसे तरावड़ी बासमती, सी एस आर-30, बासमती-370 व बौनी बासमती जैसे हरियाणा बासमती-1, पूसा बासमती-1, पूसा बासमती-4 (पूसा 1121) की रोपाई भी जुलाई के मध्य में पूरी कर लें। इसमें ब्लास्ट या बदरा रोग कम लगता है। खेत में अच्छी तरह से पौध चलने के लिए व पानी बनाए रखने के लिए खेत को अच्छी तरह कद्दू करके एकसार कर लें। रोपाई के लिए कम समय वाली बौनी किस्मों हेतु 25-30 दिन पुरानी पौध प्रयोग करें। धान की समय पर रोपाई के लिए लंबी किस्मों में कतारों में 20 सैं.मी. व पौधों में 15 सैं.मी. दूरी रखें। जबकि देर से रोपाई हेतु यह दूरी 15-15 सैं.मी. रखें। एक जगह कम से कम 2-3 पौध सीधी लगाएं लेकिन 2-3 सैं.मी. से अधिक गहरी नहीं। कल्लर वाले खेतों में एक जगह कम से कम 3-4 पौध लगाएं। धान की बौनी मध्यम, मध्यम काट अवधि व संकर धान वाली किस्मों जैसे जया, पी आर 106, एच के आर 120, एच के आर 126 एच के आर 127 व हरियाणा संकर धान-1 में 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (130 कि.ग्रा. यूरिया), 24 किलोग्राम फास्फोरस (150 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट), 24 किलोग्राम पोटाश (43 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ का प्रयोग करें जबकि कम अवधि वाली गोबिन्द में 48 किलोग्राम नाइट्रोजन व ऊपर दी गई फास्फोरस, पोटाश व ज़िंक सल्फेट की मात्रा प्रयोग करें। नाइट्रोजन की 1/3 मात्रा, फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट की पूरी मात्रा रोपाई के समय खेत में डालें। 1/3 नाइट्रोजन की मात्रा रोपाई के 21 दिन बाद और बाकी 1/3 नाइट्रोजन रोपाई के 42 दिन बाद खेत में डालें। रोपाई पर डालने वाली 1/3 नाइट्रोजन की मात्रा रोपाई के एक सप्ताह के अंदर भी डाली जा सकती है। अगर खेत में ढैंचे की हरी खाद का प्रयोग किया गया है तो नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश की 2/3 मात्रा का ही प्रयोग करें। लम्बी बासमती धान में 24 किलोग्राम नाइट्रोजन (50 कि.ग्रा. यूरिया), 12 किलोग्राम फास्फोरस (75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ दें। नाइट्रोजन रोपाई के 21 व 42 दिन बाद दो बार डालें। बौनी बासमती धान में 36 किलोग्राम नाइट्रोजन (80 कि.ग्रा. यूरिया), 12 किलोग्राम फास्फोरस (75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट दें। नाइट्रोजन की 1/3 मात्रा व फास्फोरस की पूरी मात्रा पौध लगाते समय दें। बाकी 1/3 मात्रा 21 दिन बाद व 1/3 मात्रा 42 दिन बाद दें। धान की फसल में सांवक और मोथा बहुतायत में पाए जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए ब्यूटाक्लोर (मचौटी, डेलक्लोर ई.सी. व मिलक्लोर, नर्वदाक्लोर, कैपक्लोर, ट्रैप, तीर हिल्टाक्लोर, ई.सी.) 1.2 लीटर प्रति एकड़ 60 किलोग्राम सूखी रेत में मिलाकर पौध रोपण के 2-3 दिन उपरांत 4-5 सैं.मी. गहरे पानी में एकसार बिखेर दें। इसके अतिरिक्त अन्य खरपतवार-नाशकों का प्रयोग भी समग्र सिफारिशों के अनुरूप करें।

रोपाई के (6 से 10 दिन) बाद जब पौधे ठीक प्रकार से जड़ पकड़ लें तो पानी रोक लें ताकि पौधों की जड़ें विकसित हो जाएं। एक बार में 5-6 सैं.मी. से अधिक गहरा पानी न लगाएं। धान की जड़ की सूण्डी के आक्रमण से पौधे पीले हो जाते हैं व फुटाव भी कम होता है जिससे पौधे छोटे भी रह जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए 10 किलोग्राम कार्बोफ्यूरान 3-जी या 4 किलोग्राम फोरेट (थिमेट) 10-जी प्रति एकड़ डालें। यदि पत्ता लपेट सूण्डी का आक्रमण हो तो 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. या 400 मि.ली. क्विनलफास 20 ए.एफ. को 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें।

कपास

यदि कपास की बिजाई किसी कारण देर से की हो तो जुलाई के पहले सप्ताह में फसल को पानी लगाएं तथा फालतू पौधों को निकाल दें जिससे कि एक कतार में पौधे से पौधे का फासला 30 सैं.मी. रह जाए। कोणदार धब्बों से बचाव हेतु जुलाई के पहले सप्ताह में 6-8 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन व कॉपर आक्सीक्लोराईड (600-800 ग्राम प्रति एकड़) को 150-200 लीटर पानी में मिलाकर 15-20 दिन के अंतर पर लगभग 4 छिड़काव करें। नरमा में नाइट्रोजन 35 कि.ग्रा., फास्फोरस 12 कि.ग्रा., देसी कपास में नाइट्रोजन 20 कि.ग्रा. व संकर कपास में नाइट्रोजन 70 कि.ग्रा., फास्फोरस 24 कि.ग्रा. व पोटाश 24 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की सिफारिश है। नाइट्रोजन की खाद आधी बौकी आने (जुलाई-अंत) के समय तथा आधी फूल आने के समय डालें। संकर किस्मों में इन दोनों समय पर नाइट्रोजन 1/3 की दर से डालनी चाहिए। बेहतर होगा कि सारा फास्फोरस व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट बिजाई के समय डालें।

2,4-डी कपास के लिए घातक

इसके प्रभाव से कपास की पत्तियों में बारीक कटाव (हथेली जैसा) आ जाता है, फूल गिर जाते हैं और टिण्डे नहीं बनते। इसलिए ध्यान रखें कि जिस स्प्रेयर से 2,4-डी प्रयोग में लाया गया हो उसे बीमारी व कीड़े मारने वाली दवाओं के छिड़काव के लिए प्रयोग में न लाएं। साथ ही 2,4-डी का संपर्क कपास की फसल में प्रयोग में लाए जाने वाले कीटनाशकों और फफूंदनाशकों के साथ न होने पाए। कीट या फफूंदनाशकों के छिड़काव के लिए घोल बनाने से पूर्व बोतल या टीन का लेबल ध्यान से देख लें। 2,4-डी से प्रभावित पौधों की समस्या हो जाने पर प्रभावित कोंपलों को 15 सैं.मी. काट दें और इसके बाद 2.5 प्रतिशत यूरिया तथा 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करें। खरपतवार नियंत्रण के लिए पहली गोड़ाई पहली सिंचाई से पहले कसौला से करें। बाद में हर सिंचाई के बाद

समायोज्य कल्टीवेटर से निराई-गोड़ाई करें। पहली सिंचाई जितनी देर से की जाए अच्छी है। आमतौर पर बिजाई के 40-45 दिन बाद सिंचाई करें।

कपास में बिजाई के 40-45 दिनों के बाद सूखी गुड़ाई के बाद ट्रैफलान 0.8 लीटर/एकड़ या स्टोम्प 30 ई.सी. की 1.25 लीटर मात्रा प्रति एकड़ को 200-250 लीटर पानी में घोल से उपचार के बाद सिंचाई करने से भी वार्षिक खरपतवारों का उचित नियन्त्रण हो जाता है।

हरा तेला की रोकथाम के लिए एक से दो छिड़काव 40 मि.ली. कोन्फीडोर या 40 ग्रा. एकतारा या 250-350 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 120 से 150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 15 दिन के अंतर पर छिड़कें। पहला छिड़काव तब करें जब 20 प्रतिशत पूरे विकसित पत्ते किनारों से पीले होकर मुड़ने लगें। सफेद मक्खी का भी यही इलाज है।

यदि बालों वाली सूण्डी, पत्ता लपेट सूण्डी, कुब्बड़ कीड़े या चित्तीदार सूण्डी का भी आक्रमण जुलाई अंत से मध्य अगस्त तक हो तो 600 मि.ली. क्विनलफॉस (एकालक्स) 25 ई.सी. या 75 मि.ली. स्पाईनोसैड (ट्रैसर) 75 एस सी या 1 लीटर नीम (अचूक निम्बीसीडीन) का प्रयोग करें। मीली-बग से बचाव के लिए खेतों के आसपास उगे खरपतवारों, विशेषकर कांग्रेस घास, कंघी बूटी, जंगली भ्रुट आदि को काट कर जला दें।

मूँगफली

मूँगफली की बिजाई इस माह के मध्य तक पूरी कर लें। पंजाब मूंगफली नं. 1, एम एच-4 की बिजाई क्रमश: 30×22.5 व 30-15 सैं.मी. पर करें। बीज 'केरा' विधि से खूड़ों में 5 सैं.मी. की गहराई पर डालें। पंजाब मूंगफली नं. 1 के लिए 34 किलोग्राम व एम एच-4 के लिए 32 किलोग्राम गिरी एक एकड़ के लिए काफी होगी। बोने से पूर्व स्वस्थ गिरियों का कैप्टान या थाइरम 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज से उपचार करें। सफेद लट व दीमक से फसल को बचाने के लिए 15 मि.ली. क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. या क्विनलफास 25 ई.सी. प्रति किलोग्राम बीज का बुवाई से 4-5 घंटे पहले उपचार करें। मूंगफली में 6 किलोग्राम नाइट्रोजन (13 कि.ग्रा. यूरिया), 20 किलोग्राम फास्फोरस (125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट), 10 किलोग्राम पोटाश (16 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश)व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट/एकड़ बिजाई के समय ड्रिल करें। मूंगफली में जिप्सम का प्रयोग लाभदायक पाया गया है।

बिजाई के 21 व 42 दिन पर निराई-गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण करें। पहली सिंचाई 30-35 दिन बाद तथा एक सिंचाई फूल आने पर करें।

मूँग, उड़द व लोबिया

मूँग मुस्कान, सत्या, बसंती, एम एच 421, एम एच 318, उड़द यू एच-1 तथा लोबिया एफ एस-68, एच सी 46 किस्में बोएं। मूँग व उड़द के लिए 6 से 8 किलोग्राम तथा लोबिया के लिए 12 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालें और बीज गलन व पौध अंगमारी से बचाव हेतु बीज में 4 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीज मिलाएं। बिजाई जुलाई के पहले पखवाड़े तक 30 व 45 सैं.मी. (क्रमश: सिंचित व असिंचित क्षेत्र के लिए)की दूरी पर कतारों में करें। दो बार निराई-गोड़ाई करें। इन सभी दलहनी फसलों में बिजाई के समय 6-8 किलोग्राम नाइट्रोजन (13-17.5 कि.ग्रा. यूरिया) प्रारंभिक मात्रा के रूप में तथा 16 किलोग्राम फास्फोरस (100 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ खेत में पोर दें। सभी फसलों को राईजोबियम के टीके से उपचारित करके बोएं।

सोयाबीन

सोयाबीन की पी के-416, पी के-564 व पी के-472 किस्में हरियाणा के लिए उत्तम हैं। इसकी बिजाई जून के आखिरी या जुलाई के प्रथम सप्ताह में करें। राईजोबियम के टीके से उपचारित 30 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालें। कतार का फासला 45 सैं.मी. रखकर ढाई सैं.मी. गहरी बिजाई करें। अधिक उपज पाने के लिए 10 किलोग्राम नाइट्रोजन (22 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 32 किलोग्राम फास्फोरस (200 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें। 15 व 35 दिन बाद इसकी निराई-गोड़ाई करें।

अरहर

अरहर की कम समय में पकने वाली यू पी एस-120 या मानक या पारस की बिजाई शीघ्र ही जुलाई के प्रथम सप्ताह में पूरी कर लें। एक एकड़ के लिए लगभग 5-6 किलोग्राम बीज डालें। इन सभी किस्मों की बिजाई कतारों में 40 सैं.मी. की दूरी रखकर करें। बीज को राईजोबियम के टीके से उपचारित करके ही बोएं तथा 8 किलोग्राम नाइट्रोजन (17.5 कि.ग्रा. यूरिया) व 16 कि.ग्रा. फास्फोरस (100 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें।

गन्ना

चोटी (अगोला) बेधक कीट के लिए जून में कीटनाशक न डाली हो तो अब तुरंत 13 किलोग्राम फ्यूराडान 3-जी या 8 किलोग्राम फोरेट 10-जी को खाद के साथ मिलाकर प्रति एकड़ डालें व इसके तुरंत बाद हल्की सिंचाई करें। यदि नाइट्रोजन खाद की शेष आधी मात्रा लगानी रहती है तो उसे पूरा कर लें। बसन्तकालीन फसल में 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (130 कि.ग्रा. यूरिया), 20 कि.ग्रा. फास्फोरस (125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) व 20 कि.ग्रा. पोटाश (35 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) बिजाई के समय, 1/3नाइट्रोजन दूसरी तथा 1/3 नाइट्रोजन चौथी सिंचाई के साथ डालें।

तिल

हरियाणा तिल नं. 1 व हरियाणा तिल नंबर 2 को जुलाई के पहले पखवाड़े में 4-5 सैं.मी. गहराई व 30 सैं.मी. का फासला रखकर खूडों में बोएं व पौधे से पौधे का फासला 15 सैं.मी. रखें। दो किलोग्राम प्रति एकड़ बीज प्रयोग करें। बिजाई से पूर्व प्रति किलोग्राम बीज में 3 ग्राम कैप्टान या थाइरम मिलाकर बिजाई करें। कम उपजाऊ व हल्की ज़मीन में 15 किलोग्राम नाइट्रोजन (35 कि.ग्रा. यूरिया) व 10 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति एकड़ बिजाई से पहले ड्रिल करें।

सब्जियों में

बैंगन

बैंगन की पिछली फसल के कच्चे फलों को तोड़कर बाज़ार बेचने के लिए भेज दें। फलों को तोडने के लिए किसी चाकू या तेज़ धार वाले औज़ार का प्रयोग करें जिससे कि तोड़ते समय पौधों को क्षति न हो। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। फल व तना छेदक कीड़े के लगने पर ग्रसित फलों को तोड़कर नष्ट कर दें व इसके बाद 75 ग्राम स्पाइनोसेड (ट्रेसर 45 एस.सी.) को प्रति एकड़ 80 लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अंतर पर तीन छिड़काव करें। दवा प्रयोग करने के बाद फलों को 8-10 दिन तक खाने के काम में न लाएं।

वर्षा ऋतु की फसल के लिए खेत की तैयारी करें। इसकी उन्नत किस्मों, बी आर-112, हिसार श्यामल व हिसार प्रगति को प्रयोग में लाएं। नर्सरी में पौध इस महीने तक तैयार हो जाएगी। खेत को तैयार कर क्यारियों में बांट लें। एक एकड़ खेत में लगभग 10 टन गोबर की खाद बिखेर दें और जुताई कर दें। पौधरोपण से पहले 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (87 कि.ग्रा. यूरिया), 20 कि.ग्रा. फास्फोरस (125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 10 कि.ग्रा. पोटाश (17 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ दें। कतारों का फासला लंबी किस्मों में 60 सैं.मी. तथा गोल किस्मों में 75 सैं. मी. रखें। पौधे से पौधे की दूरी 60 सैं.मी. रखें। पौधरोपण के बाद सिंचाई अवश्य करें। विषाणु रोग से बचाव के लिए शुरू से ही कीटनाशक दवाएं प्रयोग में लें।

हरा तेला, सफेद मक्खी, गोभ व फल छेदक कीड़े आदि बैंगन की फसल में नुकसान पहुंचाते हैं। रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए 300-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें। फल लगने शुरू होते ही बारी-बारी से सिन्थेटिक पाईरेथ्राएड (80 मि.ली. फैनवेलरेट) 20 ई.सी. या 200 मि.ली. डेल्टामैथ्रीन 2.8 ई.सी. को 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ छिड़कें ताकि फल छेदक का नियंत्रण भी हो जाए। सिन्थेटिक पाइरेथ्राइड का छिड़काव 21 दिन तथा दूसरे कीटनाशकों का 15 दिन के अंतर पर दोहराएं।

फूलगोभी अगेती

इसके लिए एक एकड़ खेत में लगभग 20 टन गोबर की सड़ी खाद मिलाएं तथा पौधरोपण से पहले 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (110 कि.ग्रा. यूरिया), 20 कि.ग्रा. फास्फोरस (125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश (35 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) की दर से मिलाकर खेत को समय पर तैयार करें। अगेती फूलगोभी (पूसा कातकी) की पौध इस माह तैयार हो जाएगी। अच्छा होगा कि हल्की डोलियां बना लें जिससे कि अधिक वर्षा में पौधे खराब न हों। पौधरोपण कतारों में 45 सैं. मी. की दूरी पर करें और पौधे की दूरी 30 सैं.मी. रखें। पौधरोपण शाम के समय करें तो उचित रहेगा। वर्षा न होने पर सिंचाई करें।

मिर्च

मिर्च की गर्मी की फसल की तुड़ाई करके बाज़ार भेजें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। हरा तेला, सफेद मक्खी, माईट तथा रस चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ शुरू से ही 15 दिन के अंतर पर छिड़कें। इस दवा से विषाणु रोग की रोकथाम हो सकती है क्योंकि सफेद मक्खी रोग फैलाती है। रोगग्रस्त पौधों को निकाल कर नष्ट कर दें।

मिर्च की पौध इस माह तैयार हो जाएगी। अत: रोपाई का प्रबंध करें। मिर्च के खेत की तैयारी के लिए 10 टन गोबर की खाद प्रति एकड़ की दर से बिखेर दें। खेत को उचित नाप की क्यारियों में बांट लें। पौधरोपण से पहले 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (55 कि.ग्रा. यूरिया), 12 कि.ग्रा. फास्फोरस (75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) और 12 कि.ग्रा. पोटाश (20 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की दर से खेत में मिला दें। तैयार खेत में शाम के समय पौधरोपण करें। पौधरोपण के बाद सिंचाई अवश्य करें।

भिण्डी

भिण्डी की गर्मी की फसल को हरा तेला से बचाने के लिए एकटारा 25 डब्ल्यू जी (थायामिथोक्सम) नामक दानेदार कीटनाशक 40 ग्राम दवा को 150-200 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव करें। 20 दिन के अंतराल पर यदि आवश्यकता हो तो दोहराएं। भिण्डी में फल लगने पर जो खाने के लिए उगाई गई हो उसमें 300-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. 200-300 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

वर्षाकालीन फसल के लिए यदि बिजाई जून माह में न की हो तो अब करें। एक एकड़ खेत में 10 टन गोबर की खाद डालकर जुताई करें और बिजाई से पहले 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (87 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 24 कि. ग्रा. फास्फोरस (150 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट) प्रति एकड़ की दर से दें। पोटाश खाद आवश्यकता पड़ने पर डालें। खेत को क्यारियों में बांट लें। वर्षा उपहार या हिसार उन्नत किस्मों को प्रयोग में लाएं। एक एकड़ खेत की बिजाई के लिए 5-6 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होगी। बिजाई करने से पहले बीजोपचार बाविस्टिन (2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) नामक दवा से कर लें। बिजाई कतारों में लगभग 45-60 सैं.मी. की दूरी पर करें तथा पौधों की दूरी 30 सैं.मी. रखें। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा प्रारंभ से ही खरपतवारों पर नियंत्रण रखें।

कद्दू जाति की सब्जियां

तरबूज़ व खरबूजे की फसल की तुड़ाई कर ली होगी। अत: खेत को दूसरी फसलों के लिए तैयार करें। इस जाति की और सब्जियों, जैसे लौकी, करेला, टिण्डा, तोरी, ककड़ी आदि के कच्चे फलों को तोड़कर नियमित रूप से बाजार भेजें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें।

गर्मी की पुरानी फसल को फल छेदक मक्खी से बचाने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. और 1.25 कि.ग्रा. गुड़ को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। लालड़ी का आक्रमण हो तो 25 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 30 मि.ली. फेनवेलरेट 20 ई.सी. को

100 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ की बेलों पर छिड़कें। सफेद चूर्णी रोग लगने पर 800 ग्राम घुलनशील गंधक अथवा 200 मि.ली. कैराथेन का प्रति एकड़ की दर से खेत पर छिड़काव करें। गर्मी की फसल समाप्त होने पर जुताई करें और अन्य फसलें लगाने की तैयारी करें।

वर्षाकालीन कद्दू जाति की सब्जियां लगाने के लिए खेत की तैयारी करें। खेत तैयार करते समय 6 टन गोबर की खाद, 8 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (15 कि.ग्रा. यूरिया), 10 कि.ग्रा. फास्फोरस (60 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 10 कि.ग्रा. पोटाश (16 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की दर से दें।

बिजाई नालियों के दोनों ओर करें। किस्म के चुनाव, बीज की मात्रा तथा बीजने की दूरी निम्नलिखित तालिका में दी गई है।

फसल का नाम	किस्म	बीजने की दूरी (सैं.मी.)	
		कतारों में	पौधों में
घीया	पूसा/समर प्रौलिफिक लोंग, पूसा समर प्रौलिफिक राउण्ड एवं जी एच 22	200	60
करेला	कोयम्बटूर लांग व पूसा दो-मौसमी	150	45
तोरी (चिकनी)	पूसा चिकनी व गुच्छेदार	200	60
	पूसा नसदार (धारीदार)	200	60
खीरा	जैपनीज लांग ग्रीन या स्थानीय	100-150	60
टिण्डा	हिसार सलैक्शन, बीकानेर ग्रीन व हिसार टिण्डा	150	60

खीरा के लिए लगभग एक कि.ग्रा. बीज तथा अन्य फसलों के लिए लगभग (1½-2) कि.ग्रा. बीज की प्रति एकड़ बिजाई के लिए ज़रूरत होगी। फसलों की सिंचाई आवश्यकतानुसार करें तथा खरपतवारों को निकालते रहें।

अरबी

अरबी की फसल में आवश्यकता पड़ने पर सिंचाई करें, खरपतवार निकालें तथा मिट्टी चढ़ाएं। खड़ी फसल में नाइट्रोजन वाली खाद (यूरिया) बिजाई के लगभग 7-8 सप्ताह बाद डालकर मिट्टी चढ़ा दें। बरसात की फसल की बिजाई का समय जून-जुलाई माह है। एक एकड़ खेत में बिजाई करने के लिए लगभग 300-400 कि.ग्रा. कन्दों की आवश्यकता होती है। कन्दों की बिजाई करने की दूरी 45-60 सैं.मी. कतारों में तथा 30 सैं.मी. पौधों में रखते हैं।

पालक

पालक की पहले लगाई गई फसल की आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। जब पालक काटने लायक हो जाए तो उसके पत्तों को काटकर बंडलों में बांधें तथा बाजार भेजें। नई फसल के लिए खेत की तैयारी करें तथा बिजाई करें। इसकी उन्नत किस्में, जौबनेर-ग्रीन, आलग्रीन या एच एस 23 का प्रयोग करें। इसके लिए 8 कि.ग्रा. बीज एक एकड़ में बिजाई करने के लिए काफी होगा तथा खेत तैयार करते समय लगभग 20 टन गोबर की सड़ी खाद, 32 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (70 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 16 कि.ग्रा. फास्फोरस (100 कि.ग्रा.सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ खेत में मिलाएं तथा उचित नाप की क्यारियों में खेत बांट लें। बिजाई कतारों में 15-20 सैं.मी. की दूरी पर करें।

शकरकन्दी

शकरकन्दी की उन्नत किस्में पूसा सफेद व पूसा लाल हैं। शकरकन्दी की फसल की काट को अप्रैल से जुलाई तक खेत में लगाते हैं। एक एकड़ खेत में लगभग 24000 से 28000 बेलों की काटों की आवश्यकता होती है। प्रत्येक काट लगभग 30-40 सैं.मी. लंबी होनी चाहिए। लगाने की दूरी कतारों में 60 सैं.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 सैं.मी. रखें। खेत तैयार करते समय 10 टन गोबर की खाद, 32 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (70 कि.ग्रा. यूरिया), 36 कि.ग्रा. फास्फोरस (225 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 32 कि.ग्रा. पोटाश (55 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की दर से काटें लगाने से पहले दें तथा क्यारियां बना लें। खड़ी फसल में 32 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (70 कि.ग्रा. यूरिया) की आधी-आधी मात्रा दो बार देने की आवश्यकता होती है। यदि फसल पहले लगाई जा चुकी है तब आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। लवणीय या क्षारीय भूमि में शकरकन्दी की खेती नहीं की जा सकती।

खरीफ प्याज

नर्सरी की देखभाल करें, खरपतवार निकालें, सिंचाई करें तथा अधिक वर्षा से बचाव करें। आर्द्रगलन की समस्या होने पर 0.2 प्रतिशत कैप्टान के घोल से नर्सरी की सिंचाई करें। खेत की तैयारी भी शुरू करें।

मूली

यदि आपने मूली की अगेती किस्म, पूसा चेतकी की बिजाई पहले कर रखी है तो आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। यदि नहीं तो इसकी बिजाई इस माह भी कर सकते हैं। खरपतवार निकालें व जड़ों पर मिट्टी चढ़ाएं। तैयार जड़ें उखाड़कर तथा धोकर बाज़ार भेजें। चेपा का प्रकोप होने पर 250-400 मि.ली. डाईमेथोएट 30 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। पूसा चेतकी की फसल लगभग 40 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी बिजाई के लिए लगभग 4-5 कि.ग्रा. बीज की एक एकड़ खेत के लिए आवश्यकता होगी। नई फसल लगाने के लिए खेत तैयार करते समय लगभग 20 टन गोबर की खाद, 24 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (52 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 12 कि.ग्रा. फास्फोरस (75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ डालें। बिजाई कतारों में 30-45 सैं.मी. की दूरी पर करें तथा पौधे से पौधे की दूरी 5-8 सैं.मी. रखें। उचित होगा कि बिजाई हल्की-हल्की डोलियों पर करें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें।

अन्य सब्जियां

अन्य सब्जियों, जैसे ग्वार, लोबिया आदि फसलों की आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा नर्म फलियों को तोड़कर बाज़ार भेजें। ग्वार की उन्नत किस्म पूसा नवबहार प्रयोग करें तथा बिजाई की दूरी 30-45 सैं.मी.

कतारों में तथा 15-20 सैं.मी. पौधों में रखें। एक एकड़ के लिए 6 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होगी। लोबिया की उन्नत किस्में पूसा बरसाती या पूसा दो-फसली प्रयोग करें तथा बिजाई की दूरी 30-45 सैं.मी. कतारों में तथा 15-20 सैं.मी. पौधों के बीच रखें। एक एकड़ के लिए लगभग 8-10 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होगी। हानिकारक कीड़ों से रक्षा के लिए कीटनाशक दवाओं का प्रयोग करें। दवा प्रयोग के बाद एक सप्ताह तक फसल को खाने के काम में न लें।

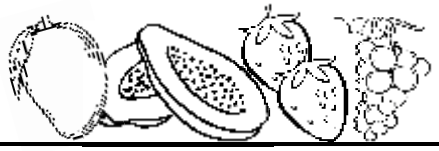

फलों में

अंगूर

फल तोड़ने के बाद जो बढ़वार आती है उसको ½-¾ मीटर रखने के बाद सिरे से तोड़ते रहें। नई बेलों में 25-50 ग्राम यूरिया प्रति बेल डाल दें और अगर वर्षा न हो तो खाद डालने के बाद सिंचाई अवश्य करें। खरपतवार नियंत्रण के पश्चात नमी को बनाए रखने के लिए काली पॉलीथीन शीट बिछाएं।

थ्रिप्स व हरा तेला के रस चूसने से पौधा पीला व भूरा-लाल हो जाता है। इनकी रोकथाम के लिए आधा लीटर मैलाथियान 50 ई.सी. या 150 मि.ली. फैनवालरेट 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। अंगूर में एन्थ्रेक्नोज बीमारी की रोकथाम के लिए बाविस्टिन 0.2 प्रतिशत का छिड़काव जुलाई के अंतिम सप्ताह में करें।

संगतरा, माल्टा इत्यादि

हर सप्ताह सिंचाई का प्रबंध करें।

इन पौधों को तेला (सिल्ला), पौधों में सुरंग बनाने वाले कीट, सफेद मक्खी और पत्ते खाने वाली सूण्डी से बचाने के लिए 625 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफोस 36 डब्ल्यू एस सी को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

बरसात की पहली बौछार के तुरंत बाद 0.3 प्रतिशत कॉपर-ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें।

फलों को गिरने से रोकने के लिए पेड़ों पर 6 ग्राम 2, 4-डी, 3 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट, 12 ग्राम ओरियोफिन्जिन और 1.5 कि.ग्रा. चूने को 550 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ जून-जुलाई में पहला छिड़काव व दूसरा छिड़काव सितम्बर के दूसरे सप्ताह में करें। अगर बाग के पास कपास खड़ी है तो 2,4-डी का छिड़काव न करें। इस परिस्थिति में 20 मि.ग्रा. एन. ए. ए. को प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। अगर पौधों में जस्ते की कमी हो तो 500 मि.ग्रा. प्लान्टोमाइसिन और 2 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का प्रति लीटर पानी की दर से जुलाई, अक्तूबर, दिसम्बर व फरवरी में छिड़काव करें।

बेर

प्रति पौधा 50 किलोग्राम गोबर की खाद अगर काट-छांट के बाद न डाली हो तो इस माह में ज़रूर डालें और 625 ग्राम यूरिया व 2.5 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट भी प्रति पेड़ डालकर गुड़ाई करें और फिर सिंचाई करें। इस महीने देसी पौधों पर चस्पा/पैच विधि द्वारा पौधे तैयार कर सकते हैं।

अमरूद

750 ग्राम यूरिया, 625 ग्राम सुपर फास्फेट, 250 ग्राम सल्फेट ऑफ पोटाश एवं बाकी आधी बची खाद इसी माह में डालकर अच्छी तरह मिलाकर सिंचाई करें। जो कीड़े अंगूर में लगते हैं वही अमरूद में लगते हैं। इसलिए अंगूर वाले कार्यक्रम को अपनाएं।

आम

फल तोड़कर मंडी भेजना शुरू कर दें। फल तोड़ते समय यह ध्यान रखें कि 'नाकू' फल के साथ अवश्य रखें।

अन्य फल

आड़ू, अलूचा और नाशपाती में सप्ताह के अंतराल पर, हल्की सिंचाई अवश्य करें। बाग के इर्द-गिर्द पौधों को गर्म एवं शुष्क हवाओं से बचाने के लिए शीशम, जामुन, पोपलर व सफेदा व करोंदा आदि के पेड़ लगाएं।

जब बगीचों में फल लग रहे हों तब उनकी कतारों के बीच फसल नहीं बोनी चाहिए लेकिन जिन बगीचों में पेड़ अभी छोटे हों और फल न लगे हों वहां पंक्तियों के बीच उड़द, लोबिया, मूंग, ग्वार आदि फसलें बोई जा सकती हैं। इन फसलों को ज़रूरत के अनुसार खाद की अतिरिक्त मात्रा भी देनी चाहिए। यदि ज़मीन कमज़ोर है तो हरी खाद के लिए ग्वार या ढैंचा अवश्य बीजें। ढैंचा को बिजाई के 45 दिन बाद जुताई करके मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें।

नोट : किसान बागों में रोटावेटर को न चलाएं। रोटावेटर की जुताई से पौधों की जड़ों को नुकसान पहुंचता है और जड़ें कट जाती हैं और पौधे को पूरी खुराक नहीं मिलती व धीरे-धीरे पौधे सूखने लगते हैं।

पशुओं में

गाय-भैंस

बरसात के मौसम में बारिश के कारण व उच्च तापमान के कारण वातावरण में आर्द्रता बढ़ जाती है। आर्द्रता के कारण पशु अपने आप को तनाव में महसूस करते हैं।

वर्षा शुरू होने पर गाय-भैंसों में छूत के रोग हो जाते हैं, विशेषकर गलघोंटू और फड़ सूजन की बीमारियां पशुओं को अधिकतर लग जाती हैं। यदि आपने अपने पशुओं को गलघोंटू या फड़ सूजन की बीमारी से बचाव के टीके अभी तक न लगवाए हों तो शीघ्र ही लगवा लें। ये टीके पशु चिकित्सालय में नि:शुल्क लगाए जाते हैं। यदि आपका पशु बीमार है तो उसे दूसरे पशुओं से अलग कर लें और उसका इलाज कराएं। जिन पशुओं की छूत की बीमारी से मृत्यु हो जाए, उन्हें गांव से बाहर गड्ढे में चूना आदि डालकर दबाएं। उनके मल-मूत्र को भी गांव के बाहर गड्ढे में डालकर दबा दें या जला दें तथा गड्ढे के आसपास तथा ऊपर चूना डाल दें।

सायं को जब पशु घर पर आते हैं तो ध्यान से देखें कि वे चारा ठीक

प्रकार से खा रहे हैं या नहीं। यदि पशु चारा, दाना न खाए तो यह इस बात का लक्षण है कि वह बीमार है। उस समय आप निकटतम पशु-चिकित्सक से मिलें और पशु का इलाज तुरंत कराएं।

बरसात के मौसम में बाड़े में पानी नहीं भरना चाहिए तथा बाड़े की नालियां साफ सूथरी रहनी चाहिएं। बाड़े की सतह सूखी व फिसलन वाली नहीं होनी चाहिए। लगातार गीले होने के कारण पशुओं के खुरों में संक्रमण होने की संभावना अधिक रहती है, इसलिए सप्ताह में एक या दो बार हल्के लाल दवाई के घोल से खुरों को साफ करना चाहिए।

इस महीने के आखिर में भैंसों का ब्यांत शुरू हो जाता है। इसलिए किसान भाई इनकी तरफ विशेष ध्यान दें।

पशुओं से पूरी मात्रा में दूध लेने के लिए यह अनिवार्य है कि इनकी खुराक में हरे चारे का प्रयोग किया जाए। दाने में मिलाकर पशुओं को 50 ग्राम खनिज मिश्रण जोकि आई.एस.आई. मार्का हो तथा नमक देना चाहिए। यह खनिज मिश्रण पशु पोषण विभाग, लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय से भी प्राप्त किया जा सकता है।

ब्याने वाली गाय-भैंस की खुराक का विशेष ध्यान रखें। खुराक ऐसी हो जो कब्ज़ न करे। जो गायें, भैंसें ब्या गई हों उन्हें उनकी दूध की मात्रा के अनुसार दाना दें। दूध देने वाली गायों और भैंसों को प्रति 2.5 कि.ग्रा. व 2 किलोग्राम दूध के लिए एक किलोग्राम दाने का मिश्रण दें। दाने की मात्रा चारे की पौष्टिकता व उपलब्धि के हिसाब से कम व ज्यादा कर सकते हैं।

नवजात बछड़े-बछडियों तथा कट्टे-कट्टियों को साफ स्थान पर रखें। गंदगी के कारण उनका सूण्ड सूज जाता है और साथ ही बुखार आता है। टांगों के जोड़ सूज जाते हैं। दस्तों की भी शिकायत हो जाती है। इस बीमारी को सूंड सूजने की बीमारी भी कहते हैं। इससे बचाने के लिए इनके लटकते हुए सूण्डों को पैदा होते ही ऊपर से डेढ इंच छोड़ कर काट देना चाहिए और कटे हुए स्थान पर टिंचर आयोडीन लगाकर साफ पट्टी बाधें। नवजात बच्चे को आधा घंटे के अंदर ही खीस पिलाएं ताकि उसकी बीमारियों से बचाव की क्षमता बढ़ जाए तथा बीमारियों से बचाव हो सके।

नवजात पशु को फर्श की फिसलन तथा वातावरण के तनाव से बचाना चाहिए।

पशुओं को बरसात में गंदा पानी पीने से रोकना चाहिए अन्यथा पेट में कीड़े हो जाते हैं और इसके कारण उनकी दूध देने की क्षमता भी घट जाती है तथा पशुओं में अन्य बीमारियां भी हो सकती हैं। पेट के कीड़ों की रोकथाम के लिए पशु चिकित्सक की सलाह से पेट के कीड़े मारने की दवा समय पर दें।

भेड़

भेड़ों में आंतों के सूजने से दस्त लग जाते हैं। इसे एनटेरोटाक्सीमिया कहते हैं। इस रोग से बचाने के लिए अपनी भेड़ों को इस बीमारी से बचाव का टीका लगवाएं। बरसात में अधिकतर भेड़ों के पेट में कीड़े हो जाते हैं। इन कीड़ों के कारण इनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है और कई प्रकार के रोग लग जाते हैं। भेड़ों को स्वस्थ रखने के लिए अपने पशु-चिकित्सक की सलाह से उन्हें नियमित रूप से कृमिनाशक दवा पिलाते रहना चाहिए। भेड़ को पीने के लिए साफ एवं स्वच्छ जल उपलब्ध करायें तथा संपूर्ण आहार दें।

कुक्कुट

जिन चूजों की आयु 6 से 8 सप्ताह तक की हो गई हो, उन्हें रानीखेत से बचाव का टीका (आर.बी. 2) लगवा लें। इन चूजों को फाऊल पॉक्स की बीमारी से बचाने के लिए भी टीका लगवा लें।

चूजों में खूनी दस्त रोकने के लिए उनकी खुराक में कॉक्सीडोयोस्टेट मिलाकर दें। ऐसे कॉक्सीडोयोस्टेट जो आसानी से मिल सकते हैं, वे हैं-बाईप्रान, एमप्रोल आदि। बाईप्रान तथा एमप्रोल को एक क्विंटल खुराक में 25 ग्राम तक मिलाया जाता है। ऐसी खुराक खिलाने से खूनी दस्त की बीमारी से बचाव हो सकता है।

चूजों का आवास हवादार होना चाहिए। इसमें बरसात के पानी का आवागमन नहीं होना चाहिए। वातावरण के तनाव से बचाव हेतु पंखों का इस्तेमाल किया जा सकता है।

घर-आंगन में

गृह विज्ञान

5 जून का दिन प्रत्येक वर्ष विश्व वातावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है। अत: इस दिन ग्रामवासियों को वातावरण की स्वच्छता के बारे में जागरूक करना अति आवश्यक है। स्वच्छता लोगों की मूलभूत आवश्यकता है क्योंकि इसका संबंध खाद्य स्वच्छता, व्यक्तिगत स्वच्छता, घरेलू तथा पर्यावरण की स्वच्छता से है। स्वच्छता की आदतों से जल और मृदा के प्रदूषण पर रोक लगती है। जिससे बीमारियां नहीं फैल पातीं। घरों में शौचालय अवश्य बनाए जाएं। यदि किसी कारणवश शौचालय प्रत्येक घर में नहीं है तो सार्वजनिक शौचालय गांव के उपयुक्त स्थान पर बनवाए जाएं तथा इनके रख-रखाव की समुचित व्यवस्था की जाए ताकि स्वच्छ भारत मिशन के तहत खुले में शौच मुक्त भारत का सपना साकार हो सके।

स्वच्छता से तात्पर्य है कि तरल तथा ठोस अपशिष्ट का ठीक ढंग से निपटारा, खाद्य स्वच्छता, व्यक्तिगत, घरेलू तथा वातावरण की स्वच्छता भी शामिल हैं। ठीक स्वच्छता न केवल सामान्य स्वास्थ्य की दृष्टि से ज़रूरी है बल्कि इसका व्यक्तिगत तथा सामाजिक ज़िन्दगी में भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। पानी की स्वच्छता के लिए जनता वाटर फिल्टर का इस्तेमाल करें जिसको घर पर बनाना बहुत ही सरल एवं सस्ता है। वातावरण की स्वच्छता के लिए पानी सोखने वाले गड्ढे, शौच के सही निपटारे के लिए गड्ढे वाले शौचालय का इस्तेमाल करें। हवा की शुद्धता एवं भूमि के संरक्षण के लिए वृक्षारोपण करें।

स्वास्थ्य शिक्षा के लिए ग्रामीण जनता को स्वास्थ सम्बन्धी सभी विषयों की जानकारी दी जानी चाहिए। इसके लिए व्यक्तिगत एवं सामुहिक सम्पर्क वार्ताएं, रेडियो, टेलिविज़न, स्वास्थ्य प्रदर्शनी आदि के माध्यम से गांवों में स्वच्छ वातावरण पैदा किया जाना चाहिए ताकि ग्रामीणों का स्वास्थ्य सुधर सके और वह रोगमुक्त होकर खुली हवा में सांस ले सकें।

कृषि शिक्षा में चौ.चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय का योगदान

- **अशोक कुमार, राजेश कुमार[1] एवं सूबे सिंह**
विस्तार शिक्षा निदेशालय
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि और उससे सम्बन्धित क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के सतत विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह न केवल 130 करोड़ भारतीयों की खाद्य एवं पोषण सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करता है अपितु रोजगार एवं अन्य व्यायवसायों में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। इसके अतिरिक्त गरीबी को कम करने और अर्थव्यवस्था के सतत विकास को सुनिश्चित करने में भी कृषि क्षेत्र की भूमिका रहती है। कृषि हमारी भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है और हरियाणा मुख्य रूप से एक कृषि प्रधान राज्य है। हरियाणा देश में कृषि उत्पादन के लिए अग्रणी राज्यों में से एक है। हरियाणा की मुख्य फसलें गेहूँ, चावल, गन्ना, कपास, तिलहन, ग्राम जौ, मक्का, बाजरा आदि हैं। हरियाणा प्रदेश के लगभग 65 प्रतिशत लोगों की जीविका कृषि पर निर्भर करती है। हरियाणा खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर है और भारत के खाद्यान्न के केंद्रीय पूल में दूसरा सबसे बड़ा योगदानकर्ता है। इस विश्वविद्यालय के कृषि स्नातक भारतवर्ष में नहीं अपितु विदेशों में भी प्रदेश का नाम रोशन कर रहे हैं। कृषि शिक्षा प्राप्त स्नातक हरियाणा राज्य में कृषि अधिकारी के अतिरिक्त अन्य सरकारी नौकरियों जैसे बैंक एवं गैर-सरकारी संस्थाओं में रोज़गार प्राप्त कर अपना भविष्य उज्ज्वल करने के साथ अपने परिवार का नाम भी रोशन कर रहे हैं।

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय (जोकि एच ए यू के नाम से भी जाना जाता है) एशिया के सबसे अच्छे कृषि विश्वविद्यालयों में से एक है जो उत्तर भारतीय राज्य हरियाणा के हिसार शहर में स्थित है। वर्ष 1970 में स्थापित यह विश्वविद्यालय राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उत्कृष्टता दर्शा चुका है। विश्वविद्यालय का लक्ष्य हरियाणा राज्य में कृषि और संबद्ध विज्ञान के क्षेत्र में एक प्रमुख शैक्षिक और अनुसंधान संगठन के रूप में कार्य करके कृषि में उत्पादकता को बढ़ावा देने के साथ-साथ शिक्षण, अनुसंधान और विस्तार प्रशिक्षण के एकीकरण को बढ़ावा देना है। भारत की हरित एवं श्वेत क्रांति में भी अग्रणी भूमिका निभा चुका है। पिछले कई वर्षों से कृषि के क्षेत्र में विशिष्ट आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए कृषि पाठ्यक्रमों में नए सिरे से तैयार किया गया है जोकि विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्रों में हो रहे प्रयोगों को किसानों के खेत तक पहुंचाने में बहुत मददगार सिद्ध हुआ है। विश्वविद्यालय के पास विभिन्न फसलों के उत्पादन और संरक्षण, नई किस्मों के विकास, कृषि प्रबंधन, जैविक/सूक्ष्म खेती, फूलों की खेती, मशरूम उत्पादन, टिशू कल्चर, पौध नर्सरी, मधुमक्खीपालन से संबंधित क्षेत्रों में विभिन्न तकनीकों में विशेषज्ञता है।

विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकगणों की गणना विश्व के विख्यात कृषि वैज्ञानिकों में होती है। संकाय के ईमानदार और ठोस प्रयोसों ने विश्वविद्यालय को कई राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त किए हैं। विश्वविद्यालय को 1996 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर), नई दिल्ली से सर्वश्रेष्ठ संस्थान पुरस्कार के रूप में मान्यता मिली हुई है। वर्ष 2016 के लिए सरदार पटेल उत्कृष्ट आईसीएआर संस्था पुरस्कार प्राप्त हुआ है। हाल ही में विश्वविद्यालय को राज्य में कृषि के स्थाई विकास के लिए हरियाणा किसान रत्न पुरस्कार माननीय राष्ट्रपति श्री राम नाथ कोविंद के द्वारा प्रदान किया गया है।

राज्य में कृषि से संबंधित क्षेत्रों में उद्यमशीलता की गतिविधियों को मजबूत करने के लिए, विश्वविद्यालय एवं नाबार्ड के सहयोग से कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में नवाचारों, कौशल निर्माण और उद्यमियों के विकास पर ध्यान देने के साथ एग्रीबिजनेस इंक्यूबेशन सेंटर की स्थापना की गई है जो छात्रों, किसानों/बेरोजगार युवाओं/उद्यमियों को प्रोत्साहन एवं मदद करने के लिए कृषि और संबद्ध क्षेत्रों से संबंधित परामर्श, प्रशिक्षण और व्यावसायिक सलाहकार सेवाओं के माध्यम से मार्गदर्शन, प्रौद्योगिकी और बुनियादी ढांचा प्रदान कर सकती है और क्षमता निर्माण पर ध्यान केंद्रित कर सकती है। गुणवत्ता आश्वासन और सुरक्षा मानकों, प्रमाणन, ब्रांडिंग और विभिन्न उत्पादों के विपणन पर जोर देने के साथ कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में व्यवसाय को चलाना और बनाए रखना। केंद्र न केवल उपलब्ध तकनीकों का व्यवसायीकरण करेगा अपितु ग्राहक को स्वयं की इकाई स्थापित करने, रोजगार सृजित करने और लघु एवं मध्यम उद्यमियों के लिए आमदनी बढ़ाने में करने में मदद करेगा, बल्कि अपने कृषि का व्यावसायिक रूप से परीक्षण करने वाले नवप्रवर्तकों और उद्यमियों के लिए अंतिम छोर तक समाधान प्रदान करने के लिए काम करेगा।

इस विश्वविद्यालय का मुख्य उद्देश्य देश के किसानों को नई-नई तकनीकों के साथ-साथ नई पीढ़ी के बच्चों को कृषि वैज्ञानिक बनाने के लिए कृषि एवं कृषि सम्बन्धित विषयों में छः वर्षीय एवं चार वर्षीय स्नातक, स्नातकोत्तर एवं पी.एच.डी. पाठ्यक्रमों में डिग्री प्रदान करना है। कृषि की पुरानी पद्धति के स्थान पर नवीनतम कृषि जानकारियां किसानों को उपलब्ध करवाकर कृषि क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव लाने में यह महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। विश्व के अग्रणीय विश्वविद्यालयों के साथ कृषि शिक्षा के क्षेत्र सहमति ज्ञापन पत्र हस्ताक्षर किए हुए हैं जिससे यहां के छात्रों को विदेश में भी कृषि शिक्षा ग्रहण करने का अवसर मिलता है। विश्वविद्यालय अपने छात्रों को विभिन्न प्रतिष्ठित राष्ट्रीयकृत संस्थानों और शोध संस्थानों में उपयुक्त स्थान दिलाने में मदद करता है। बैंक, कृषि आधारित कंपनियां/उद्योग/बहुराष्ट्रीय कंपनियां/गैर सरकारी संगठन आदि में यहां के विद्यार्थी अच्छे वेतन पर नौकरी करते हैं। विश्वविद्यालय में भारत के अतिरिक्त और भी देशों के छात्र-छात्राएं अपनी कृषि सम्बन्धित अध्ययन के लिए आते हैं।

चार वर्षीय कृषि स्नातक के लिए विज्ञान विषय के साथ 10+2 शिक्षा अनिवार्य है तथा छः वर्षीय कृषि स्नातक के लिए दसवीं कक्षा पास होना अनिवार्य है। इन दोनों कृषि स्नातक डिग्री पाठ्यक्रमों में दाखिला लिखित प्रवेश परीक्षा के द्वारा मैरिट के आधार पर किया जाता है। गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी इन पाठ्यक्रमों के लिए दाखिला प्रक्रिया चल रही है जिसकी अंतिम तिथि 21.5.2019 है। अधिक जानकारी के लिए विश्वविद्यालय की वैबसाईट https://www.hau.ac.in पर भी देखी जा सकती है। इसके अतिरिक्त हरियाणा राज्य के प्रत्येक जिले में स्थित कृषि विज्ञान केन्द्रों पर भी इस बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

[1]डी.टी.पी. ऑपरेटर, प्रकाशन अनुभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार

मानसून पूर्वानुमान और उसका कृषि पर प्रभाव

- **योगेश कुमार, राज सिंह एवं अनिल कुमार**
कृषि मौसम विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

झाड़-झंखाड़ को उखाड़ती-पछाड़ती पहले आती है बुढ़िया आंधी यानी काल बैशाखी। इसके बाद ही आती है बरखा बहार। कभी थम कर बरसता है तो कभी जमकर। यह मानसून शब्द अरबी भाषा के मौसिन और मलय भाषा के मोनसिन शब्द से बना है। जिस का मतलब होता है हवाओं के नियमित व स्थायी मार्ग में अस्थायी परिवर्तन।

आज इक्कीसवी सदी में भी दक्षिण एशिया विशेषकर भारत की कृषि अर्थव्यवस्था के लिए किसान ही नहीं पूरा देश मई के अंतिम सप्ताह से दक्षिणी पश्चिमी मानसूनी हवाओं की तरफ केरल में प्रवेश को लेकर टकटकी लगाए बेसब्री से प्रतीक्षा करता है क्योंकि आज भी हमारे देश में 60 प्रतिशत से अधिक कृषियोग्य भूमि मानसून की वर्षा पर पूरी तरह से निर्भर करती है तथा कुल वर्षा का 80 प्रतिशत हिस्सा इसी मानसून ऋतु में होता है। आज भी मानसून को हमारे देश की समृद्धि का सूचक माना जाता है। बिजली उत्पादन, भूजल का पुनर्भरण, नदियों का पानी भी मानसून पर निर्भर है। यदि देश में दक्षिण पश्चिमी मानसून की वर्षा अच्छी होगी तो कृषि उपज बढ़ेगी तो ही महंगाई काबू में रहेगी। यदि मानसून का मिजाज बिगड़ा तो कृषि उपज तो कम पैदा होगी ही परन्तु साथ में महंगाई भी बढ़ेगी।

देश में मानसून के चार महीनों में 89 सैंटीमीटर औसत वर्षा होती है। 80 प्रतिशत वर्षा मानसून के चार महीनों जून-सितंबर के दौरान होती है। भारत मौसम विज्ञान विभाग ने भविष्यवाणी की है कि 2018 में सामान्य मानसूनी वर्षा होने की संभावना है। मानसून भारतीय खेती की जीवनधारा है। इस पर 2 अरब डॉलर की अर्थव्यवस्था निर्भर करती है। 50 प्रतिशत कृषि को पानी वर्षा के जरिये ही प्राप्त होती है। ऐसे में खराब मानसून से देश की कृषि सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी पर बुरा प्रभाव पड़ता है। खराब मानसून से कृषि पर बहुत फर्क पड़ता है। भारत में 2016 और 2017 में सामान्य से कम मानसून रहा। वही 2014 और 2015 में मानसून खराब रहा। खराब मानसून सूखे जैसी स्थिति पैदा कर सकता है। एक सामान्य मानसून कृषि उत्पादन को बढ़ता है। भारत में 800 मिलियन लोग गांवों में रहते हैं और कृषि पर निर्भर हैं। यह भारत की सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी का 15 प्रतिशत है। सामान्य से ऊपर मानसून रहने पर किसानों की आय में उछाल मिलता है और ग्रामीण बाज़ारों में उत्पादों की मांग बढ़ती है। अगर मानसून सही नहीं रहता तो देश की अर्थव्यवस्था पर गलत प्रभाव पड़ता है।

कैसे शुरू होता है - मानसून : देश में गर्मी की शुरुआत होते ही किसान मानसून पर टकटकी लगाकर बैठ जाते हैं। लेकिन मानसून एक ऐसी अबूझ पहेली है जिसका अनुमान लगाना बेहद जटिल है। कारण यह है कि भारत में विभिन्न किस्म के जलवायु ज़ोन और उपज़ोन हैं। हमारे देश में 127 कृषि जलवायु उपसंभाग हैं और 36 संभाग हैं। हमारा देश विविध जलवायु वाला है। समुद्र हिमालय और रेगिस्तान मानसून को प्रभावित करते हैं। इसलिए मौसम विभाग के तमाम प्रयासों के बावजूद मौसम के मिजाज को सौ फीसदी भांपना अभी भी मुश्किल है।

मानसून शब्द अरबी भाषा के मौसिम शब्द से बना है जिसका मतलब है हवाओं का मिजाज। इसका प्रयोग अरब सागर में बहने वाली हवाओं के लिए किया जाता था। मानसून का इतिहास काफी पुराना माना जाता है। शीतऋतु में हवाएं उत्तर पूर्व से दक्षिण पश्चिम दिशा में बहती हैं जिसे शीत ऋतु का मानसून कहा जाता है। जबकि ग्रीष्म ऋतु में इसके विपरीत हवाएं बहती हैं। इसे दक्षिण पश्चिम मानसून या गर्मी का मानसून कहा जाता है, वैज्ञानिक शब्दावली में मानसून को नम हवा कहा जाता है। जो किसी विशेष मौसम में एक विस्तृत क्षेत्र में अधिक वर्षा करती हो।

ग्रीष्म ऋतु में जब हिन्द महासागर में सूर्य विषुवत रेखा के ठीक ऊपर होता है तो मानसून बनता है। इस प्रक्रिया में समुद्र गरमाने लगता है और उसका तापमान 30 डिग्री तक पहुंच जाता है। वहीं उस दौरान धरती का तापमान 45 डिग्री तक पहुंच चुका होता है। ऐसी स्थिति में हिन्द महासागर के दक्षिणी हिस्से में मानसूनी हवाएं सक्रिय होती हैं। ये हवाएं आपस में क्रॉस करते हुए विषुवत रेखा पारकर एशिया की तरफ बढ़ने लगती हैं। इसी दौरान समुद्र के ऊपर बादलों के बनने की प्रक्रिया शुरू होती है। विषुवत रेखा पारकर के हवाएं और बादल वर्षा करते हुए बंगाल की खाड़ी और अरब सागर का रुख करते हैं। इस दौरान देश के तमाम हिस्सों का तापमान समुद्रतल के तापमान से अधिक हो जाता है। ऐसी स्थिति में हवाएं समुद्र से ज़मीन की ओर बहनी शुरू हो जाती हैं। ये हवाएं समुद्र के जल के वाष्पन से उत्पन्न जल वाष्प को सोख लेती हैं और पृथ्वी पर आते ही ऊपर उठती हैं और वर्षा देती हैं। बंगाल की खाड़ी और अरब सागर में पहुंचने के बाद मानसूनी हवाएं दो शाखाओं में विभाजित हो जाती हैं। एक शाखा अरब सागर की तरफ से मुंबई, गुजरात, राजस्थान होते हुए आगे बढ़ती है तो दूसरी शाखा बंगाल की खाड़ी से पश्चिम बंगाल, बिहार, पूर्वोत्तर होते हुए हिमालय से टकरा कर गंगीय क्षेत्रों की और मुड़ जाती है और इस प्रकार जुलाई के पहले सप्ताह तक पूरे देश में झमाझम पानी बरसने लगता है।

ये मॉनसूनी हवाएं सर्वप्रथम केरल में सामान्यत: 1 जून को प्रवेश करती हैं। अरब सागर व बंगाल की खाड़ी से आ रही मॉनसूनी हवाएं उत्तर भारत में जुलाई व अगस्त मास में अधिक वर्षा करती हैं तथा बीच में 10 से 20 दिन का विश्रांत आ जाता है जिस कारण इस समय मैदानों में वर्षा न होकर ये हवाएं हिमालय की तलहटियों की तरफ चली जाती हैं। जिससे उसी क्षेत्र में वर्षा होती है। विश्रांत के बाद फिर से मॉनसूनी हवाएं अनुकूल परिस्तिथि बनने के बाद मैदानी क्षेत्रों में वर्षा करने लगती हैं।

हरियाणा में आमतौर पर मानसून जुलाई के प्रथम सप्ताह में प्रवेश कर मध्य सितम्बर तक वर्षा करता है। उत्तर भारत में सितम्बर के अंतिम सप्ताह या अक्तूबर के प्रथम सप्ताह में निम्न दबाव का क्षेत्र उच्च दबाव की स्थिति में विकसित होने लगता है जिससे हवाओं का रुख बदल जाता है। खुश्क हवाएं ज़मीन से समुन्द्र की तरफ उत्तर पूर्वी दिशा में बहने लगती हैं इसे मानसून का लौटना कहा जाता है। जब ये लौटती खुश्क हवाएं बंगाल की खाड़ी को पार करते समय नमी ग्रहण कर लेती हैं तथा भारत के पूर्वी तटीय भागों में विशेषकर तमिलनाडु और आंध्रप्रदेश में सामने से भारी वर्षा करती हैं। इन उत्तर पूर्वी हवाओं से होने वाली वर्षा को उत्तर पूर्वी मानसून कहा जाता है। इस तरह मानसून जून के प्रथम सप्ताह तक प्रायद्वीपीय भारत में प्रवेश करता है और सितंबर के आरंभ में इसका भारत से निवर्तन होने लगता है। अत: जून से सितंबर के मध्य मानसून की अवधि लगभग 100 से 120 दिनों की होती है।

मानसून की अच्छी वर्षा होने पर फसल उत्पादन बढ़ने के साथ सकल घरेलू उत्पाद के निर्धारण में भी अपना विशेष योगदान देता है। भारत में दक्षिणी पश्चिमी मानसून सामान्यत: निश्चित समय पर आ जाता है तथा औसत वर्षा भी कर देता है परन्तु इसकी अनिश्चितता का डर बना रहता है।

कभी-कभी तो ये देश में समय से पहले भी पहुंच जाता है तथा कभी ये देर से आता है तथा इसकी गति भी धीमी हो जाती है जिस कारण वर्षा कम होती है तब इसे कमज़ोर मानसून की संज्ञा देते हैं। कमज़ोर मानसून कहने का सीधा-सा अर्थ है - देश में बिजाई का क्षेत्र तो घटेगा ही तथा बाद में देश का खाद्यान्न उत्पादन भी कम हो जायेगा। मानसून की कम वर्षा से हरियाणा में खरीफ की फसलों पर दुष्प्रभाव पड़ेगा जिनमें मुख्य हैं धान, गन्ना, नरमा और कपास, मक्का आदि। देर से राज्य में मानसून आने पर फसलों की बिजाई पूरी नहीं हो पाती तथा जिन फसलों की बिजाई जैसे-तैसे हो जाती है उनकी बढ़वार रुक जाती है या नमी की कमी से नष्ट हो जाती है।

मानसून का पूर्वानुमान : भारत में मानसून की अवधि चार महीने यानी 1 जून से 30 सितम्बर तक मानी जाती है। इससे सम्बन्धित सभी भविष्यवाणियां 16 अप्रैल से 25 मई के दौरान दो भागों में की जाती हैं। पहले भारत मौसम विज्ञान विभाग लगभग 16 पैरामीटरों का बारीकी से अध्ययन कर मानसून की भविष्यवाणी करता है। अब 5 पैरा मीटरों को आधार बनाकर मानसून के पूर्वानुमान निकाले जाते हैं। पूर्वानुमान निकालते समय तापमान, हवा, दबाव और बर्फबारी जैसे कारकों का ध्यान भी रखा जाता है।

भारत मौसम विज्ञान विभाग अप्रैल के मध्य में मानसून को लेकर दीर्घावधि पूर्वानुमान जारी करता है। इसके बाद फिर मध्यमअवधि और लघुअवधि के पूर्वानुमान जारी होते हैं। नाऊकास्ट कर के मौसम विभाग अब कुछ घंटे पहले भी मौसम की भविष्यवाणी करता है। भारत मौसम विज्ञान विभाग की भविष्यवाणियों में हाल के वर्षों में सुधार हुआ है। इधर देशभर में कई जगहों पर डाप्लर राडार लगाए जाने हैं जिससे आगे स्थिति और सुधरेगी। अभी मध्यम अवधि की भविष्यवाणियां जो 7-10 दिन की होती हैं 70-80 फीसदी तक सटीक निकलती हैं। हां लघुअवधि की भविष्यवाणियां जो अगले 24 घंटों के लिए होती हैं करीब 90 फीसदी तक सही होती हैं। नाऊकास्ट की भविष्यवाणियां करीब-करीब 99 फीसदी सही निकलती हैं।

सामान्य मानसून के फायदे

- *खाद्यान्न उत्पादन बढ़ेगा :* वर्षा अच्छी होने से कृषि पर सबसे अच्छा प्रभाव पड़ता है। जहां सिंचाई की सुविधा नहीं है वहां वर्षा होने से फसल अच्छी हो सकेगी। जहां सिंचाई के साधन हैं तो समय पर अच्छी वर्षा होने से किसानों को नलकूप नहीं चलाने पड़ेंगे। उनके डीज़ल की बचत होगी। कहने का तात्पर्य यह है कि उनकी लागत घटेगी। अच्छे उत्पादन से किसानों को लाभ होगा। खाद्यान्नों की मूल्य वृद्धि भी नियंत्रित रहेगी। कृषि का अर्थव्यवस्था में योगदान है। इसलिए पूरी अर्थव्यवस्था को मानसून मज़बूती प्रदान करता है।
- *बिजली संकट कम होगा:* मानूसन के चार महीनों में झमाझम वर्षा से नदियों, जलाशयों का जलस्तर बढ़ता है। इससे बिजली उत्पादन अच्छा रहता है। यदि वर्षा कम हो और जलस्तर कम हो जाए तो बिजली उत्पादन भी प्रभावित होता है। बिजली कटौती बढ़ जाती है।
- *पानी की कमी दूर होगी :* अच्छे मानसून से पानी की समस्या का भी काफी हद तक समाधान होता है। एक तो नदियों तालाबों में पर्याप्त पानी हो जाता है। दूसरे भूजल का भी पुनर्भरण होता है। यदि मानूसन अच्छा रहे तो अगले साल गर्मियों तक पानी के स्रोतों पर इसका सकारात्मक प्रभाव रहता है।
- *गर्मी से राहत:* मानसून की वर्षा जहां एक ओर खेती-बाड़ी, जलाशयों, नदियों को पानी से लबालब कर देती है वहीं दूसरी ओर भीषण गर्मी से तप रहे देश को भी गर्मी से राहत प्रदान करती है ।

नलकूपः भारतीय कृषि की जान

- **नरेंद्र कुमार एवं अरविन्द**
कृषि अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में कृषि मुख्य रूप से वर्षा पर निर्भर है। हमारे देश में वर्षा बड़ी ही अनिश्चित है। वर्षा पर कृषि की निर्भरता के कारण पैदवार बड़ी अनिश्चित है। किसी वर्ष तो वर्षा सही समय पर होने के कारण पैदावार अच्छी होती है तो किसी वर्ष वर्षा कम होने की वजह से पैदावार में गिरावट आती है। भारत की बड़ी जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराने के लिए कृषि में पैदावार का बढ़ाना बहुत आवश्यक है। हम वर्षा पर निर्भर नहीं रह सकते इसके लिए हमे सिंचाई के और साधनों के विकास की आवश्यकता है। नलकूप सिंचाई का एक सबसे आसान तरीका है। नलकूपों ने भारतीय कृषि में नई जान डाल दी है। नलकूपों से सिंचाई की एक बहुत बड़ी समस्या का हल हो गया है। वर्षा पर हमारी निर्भरता खत्म हो गयी है। नलकूपों की सहायता से हम ज़मीन के पानी को खींच कर कृषि के लिए उपयोग करते हैं। एक पाइप को हम ज़मीन में बोर बनाकर उसमें डाल देते हैं। फिर किसी मोटर की सहायता से उसे खींच कर सिंचाई में उपयोग करते हैं।

नलकूप से होने वाली सिंचाई के लाभ : इस तरह की सिंचाई में पानी हर समय उपलब्ध रहता है। आप किसी भी समय सिंचाई कर सकते हैं। नलकूप खेतों के पास ही लगे होते हैं इसलिए इस से पानी का रिसाव कम होता है और सिंचाई की क्षमता भी बढ़ती है। इस तरह की सिंचाई में हम हर तरह की फसलें ले सकते हैं क्योंकि पानी हमारी समस्या नहीं रहती। जहाँ पानी का स्तर ऊपर हो वहाँ नलकूप पानी के सत्तर को भी नियंत्रित करता है। पानी की उपलब्धता के कारण पैदावार भी बढ़ती है जिस वजह से किसानों के पास फसल उगने का विकल्प बढ़ जाता है। पैदावार में वृद्धि होती है जिस से किसानों की आय बढ़ती है।

नलकूप की सिंचाई से हानि : नलकूपों का भाव अधिक होता है जिस कारण से हम एक बहुत बड़े क्षेत्र में इसका प्रयोग नहीं कर सकते। नलकूप से होने वाली सिंचाई, नहरों से होने वाली सिंचाई से महँगी है। नलकूपों से पानी निकालने के लिए मोटर की आवश्यकता होती है, इसकी देखभाल में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। मोटर को चलने के लिए बिजली या डीज़ल की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए बिजली की सप्लाई का ध्यान रखना पड़ता है। पानी के अधिक दोहन से जल स्तर नीचे हो जाता है।

नलकूपों में ऊर्जा बचाने के लिए सुझाव

1. उचित क्षमता वाले पंप सेटों का प्रयोग करना चाहिए ताकि नलकूपों से पानी पूरा मिले।
2. पंप का चयन फसल, भूजल की स्थिति और सिंचित क्षेत्र के अनुसार करना चाहिए।
3. पंप जलस्तर के पास होना चाहिए।
4. निकासी पाइप की धरातल से ऊंचाई कम होनी चाहिए।
5. पाइप में जो बैंड लगे होते हैं वे तीव्र न होकर घुमावदार होने चाहिएं।
6. स्टील के पाइपों की बजाए प्लास्टिक के पाइपों का प्रयोग करना चाहिए।
7. बी.आई.एस. हॉलमार्क वाले पाइपों का इस्तेमाल करना चाहिए।
8. पाइप का व्यास बहुत छोटा नहीं होना चाहिए।
9. मोटर को समय-समय पर चैक करते रहना चाहिए।

फलों और सब्जियों का कचरा : संरक्षण

- **कनिका पंवार एवं विजय कुमार**
क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, करनाल (हरियाणा)
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फल और सब्जी प्रसंस्करण, पैकिंग, वितरण और उपभोग के द्वारा एक बड़ी मात्रा में कचरा उत्पन्न होता है। उदाहरण के तौर पर भारत, फिलीपींस, चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका में लगभग 1.81, 6.53, 32.0 और 15.0 करोड़ टन फल और सब्जी का कचरा उत्पन्न होता है। फल और सब्जी प्रसंस्करण में इस्तेमाल एक-तिहाई उत्पाद निकलता है, जो कि एक महत्वपूर्ण पर्यावरणीय समस्या पैदा कर रहा है। भारत में फलों व सब्जियों के प्रसंस्करण की प्रयोजनों द्वारा इस्तेमाल कुल उत्पादन केवल 1.8 प्रतिशत है। भारत में लगभग 4000 प्रसंस्करण इकाइयां हैं जिनका फल और सब्जी उत्पादनों में 8.0 लाख टन का कारोबार है। इन इकाइयों का 90 प्रतिशत लघु उद्योग क्षेत्र में है जिनकी वार्षिक उत्पादन की सीमा 50-250 टन है। इन इकाइयों के कचरा निपटान की कोई संगठित विधि नहीं है।

फल और सब्जी कचरे में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खनिज, फाइबर आदि की समृद्ध मात्रा होती है तथा इनमें पोषण भी प्रचुर मात्रा में होते हैं। फल और सब्जी प्रसंस्करण उद्योग द्वारा उत्पन्न कचरे इसके उपयोग व संरक्षण के कारण वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित करते हैं। फल और सब्जी कचरे का अत्यधिक भाग जैसे कि टमाटर खली (पोमेस), लौकी खली (पोमेस), नींबू का गूदा, गाजर का गूदा, बेबी कॉर्न की भूसी और चारा, गोभी और फूलगोभी पत्ते, सरसों साग और मटर की फली, अन्नानास कचरा और अन्नानास की भूसी आदि मुख्य रूप से उच्च नमी (80-90 प्रतिशत), कुल घुलनशील शर्करा (6-64 प्रतिशत) और क्रूड प्रोटीन (10-24 प्रतिशत) मात्रा की वजह से जल्दी ही खराब हो जाते हैं।

पीक उत्पादन या प्रसंस्करण के मौसम के दौरान, इन संसाधनों की भारी मात्रा और एक ही गति से सेवन नहीं हो पाने के कारण पर्यावरण प्रदूषण का कारण बनते हैं। इसलिए इन संसाधनों के संरक्षण के लिए उपयुक्त तरीकों को अपनाना चाहिए ताकि लीन पीरियड में यह पशु चारे के रूप में उपलब्ध हो। इससे पर्यावरण प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी। अन्त में, उपरोक्त उपक्षेप फल और सब्जी प्रसंस्करण कचरे के संरक्षण पर एक अवलोकन प्रदान करता है । फल व सब्जियों के संरक्षण के लिए सबसे अधिक इस्तेमाल किये गए तरीके हैं :

1. **सुखाना :** फल और सब्जियों के कचरे (जैसे कि सेब खली (पोमेस), टमाटर खली (पोमेस), लौकी खली, अन्नानास की भूसी और गाजर लुगदी) में 90 प्रतिशत पानी होता है। इस प्रकार सुखाने की प्रक्रिया को संरक्षण के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। इस प्रकार सुखाने की प्रक्रिया द्वारा फल व सब्जियों का संरक्षण किया जा सकता है। सुखाने से पहले ताज़े कचरे के ढेर को तिरछा करें ताकि अतिरिक्त पानी बाहर आ सके। यदि यांत्रिक प्रैस या थर्मल सुखाने की सुविधा उपलब्ध नहीं है तो कचरे की 5-7 सैंटीमीटर मोटी परत एक ठोस फर्श पर फैला लें ताकि सूर्य की सीधी किरणों से वह सूख जाये। कचरा जैसे कि कटे हुए केले के पत्ते, मटर की फली, टमाटर पोमेस और मटर को सूर्य द्वारा आसानी से सुखाया जाता है। सामग्री को कांटे की मदद से दिन में 2-3 बार उल्टा लें ताकि ड्राई मैटर (शुष्क पदार्थ) लगभग 90 प्रतिशत तक पहुंच जाये। गर्मी के मौसम में (40-45 डिग्री सेल्सियस) वांछित शुष्क पदार्थ 2-3 दिनों के भीतर में ही मिल जाता है। विलय मिल (Willey mill) द्वारा 1-2 मिलीमीटर की स्क्रीन का उपयोग कर सूखी अपशिष्ट को पीस लें। पिसे हुए अपशिष्ट को अन्त में पॉलिथीन बैग में इकट्ठा कर आवश्यकता होने पर इस्तेमाल कर सकते हैं।

2. **एन्सिलिंग :** लम्बे समय से एन्सिलिंग भोजन के संरक्षण के लिए सबसे उपयुक्त तरीकों में से एक है। एन्सिलिंग एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा घास व अन्य फसल को साइलो या साइलेज में रखा जाता है ताकि उन्हें साइलेज के रूप में परिरक्षित किया जा सके। फल एवं सब्ज़ी से उत्पन्न कचरे को ताज़े, सूखी व एनसीलेड रूपों में पशु को खिलाने, कम्पोस्टिंग व जैव ईंधन के उत्पादन के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। एन्सिलिंग दो तरीकों के द्वारा किया जाता है :

क. बंकर या गड्ढे साइलो में एन्सिलिंग : हरी पत्तेदार अपशिष्ट की मात्रा को देखते हुए एन्सिलिंग द्वारा बंकर खाई एवं गढ़े साइलो में संरक्षित किया जा सकता है। जिसमें तापमान 10 और 38 डिग्री सेल्सियस के बीच में व मध्यम तापमान 32 डिग्री सेल्सियस होना चाहिए। गड्ढे का आकार 10 मीटर लम्बा 3 मीटर चौड़ा 1.5 मीटर गहरा होना चाहिए। एक घन मीटर लगभग 0.5 टन हरे अपशिष्ट को समायोजित कर सकता है और तदनुसार अपशिष्ट की उपलब्धता को देखते हुए आकार को समायोजित कर सकते हैं। अपशिष्ट जैसे कि केले के पत्ते, गोभी व फूल गोभी के पत्ते को बेबी कॉर्न के भूसे व चारे के साथ 1-2 दिन के लिए खुले में सूखने दिया जाना चाहिए तथा साथ ही साथ चाफ (फूस) को 3-5 सैंटीमीटर के आकार में काटें। सूखे व कटे हुए कचरे को 70:30 अनुपात में गेहूं के भूसे, चावल के भूसे या मक्के के स्टोवेर्स के साथ मिलाना चाहिए उसके बाद कम गुणवत्ता वाले फसल अवशेषों को खाई के फर्श पर 5-7 सैंटीमीटर फैला लें ताकि किण्वन (फर्मेंटेशन) के दौरान निकला हुए एफ्फ्लुएंटस (अवशोषण) को सोख लिया जाये।

गड्ढों को समान रूप से मिश्रित अपशिष्ट और स्ट्रॉ/स्त्रोवेर से 40 से 60 किलो के बैच में रोंध कर (ट्रम्पलिंग द्वारा) भरें तथा ये सुनिश्चित कर लें कि गड्ढा चफ्फड़ अपशिष्ट से अच्छे तरह से भरा हो उसमें कोई हवा न हो। बड़े साइलो में फूस कटर व ब्लोअर की मदद से सीधे ही भर लें व साथ ही साथ उसे ट्रैक्टर द्वारा प्रेसिंग व पैकिंग करें। साइलो गड्ढे/खाई को पॉलिथीन शीट और मिट्टी से अच्छी तरह बंद कर दें और 42 दिनों तक फरमेंट करने के लिए छोड़ दें। मिट्टी की सीलिंग सूख जाने पर दरारें दिखाई देंगी। गड्ढों को 42 दिनों बाद खोल दें तथा साइलेज को दैनिक आवश्यकता के अनुसार निकालें और गड्ढे को पॉलिथीन शीट से दोबारा बंद कर दें।

ख. ट्यूब साइलो में एन्सिलिंग : हरी पत्तेदार अपशिष्ट को 10 से 12 फ़ीट लम्बी, 60 -80 माइक्रोन मोटी, 6 फीट व्यास की लो डेंसिटी पोलीऐथिलेन (LDPE) ट्यूब में संरक्षित कर सकते हैं जो 0.5 टॉन्स के हरी अपशिष्ट को समायोजित कर सके। पर्यावरण तापमान 10 और 38 डिग्री सेल्सियस के बीच में व मध्यम तापमान 32 डिग्री सेल्सियस होना चाहिए। अपशिष्ट जैसेकि केले के पत्ते, गोभी व फूल गोभी के पत्ते को बेबी कॉर्न के हस्क व चारे के साथ 1-2 दिन के लिए खुले में विल्ट किया जाना चाहिए तथा चाफ (फूस) 3-5 सैंटीमीटर आकार में काटें। विल्टेड व चाफ अपशिष्ट को 70:30 अनुपात में गेंहू के भूसे, चावल के भूसे या मक्के के स्टोवेर्स के साथ मिलाना चाहिए। उसके बाद कम गुणवत्ता वाले फसल अवशेषों को लो डेंसिटी पोलीऐथिलेन ट्यूब के तल पर 5-7 सैंटीमीटर फैला लें ताकि किण्वन (फर्मेंटेशन) के दौरान निकला हुए एफ्फ्लुएंटस (अवशोषण) को सोख लिया जाये। हर समय 40-60 किलोग्राम अपशिष्ट को स्थानान्तरित करें तथा साथ में अपशिष्ट को दबाते भी रहें ताकि उसे डालते समय को हवा ट्यूब मे भर नहीं जाये और ट्यूब को पूरी तरह से भर दें। पैकिंग के बाद ट्यूब के शीर्ष भाग को नायलॉन रस्सी से बांध दें। 42 दिनों के बाद ट्यूब से साइलेज को आवश्यकता अनुसार बाहर निकालें और ट्यूब को दोबारा रस्सी से बंद कर दें। ल.डी.प.इ ट्यूब में एन्सिलिंग भूमिहीन, सीमांत और छोटे किसानों द्वारा अधिक पसंद की जाती है क्योंकि यह प्रारंभिक बुनयादी ढांचे में निवेश कम करता है और इसे सम्भालना भी आसान है।

टपका सिंचाई प्रणाली में बहाव अवरोधन से बचाव : अम्ल प्रक्रिया द्वारा

- **प्रमोद शर्मा, संजय कुमार एवं नरेंद्र कुमार**
मृदा एवं जल अभियांत्रिकी विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

प्राकृतिक संसाधनों में जल का हमारे जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। दिन-प्रतिदिन बढती हुई जलावश्यकता को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि आने वाले समय में शुद्ध जल एक दुर्लभ संसाधन हो जाएगा। इसके साथ-साथ उपलब्ध जल की गुणवत्ता भी लगातार घटती जा रही है। अत: विवेकपूर्ण एवं सुनियोजित उपायों द्वारा जल का संरक्षण आज अत्यंत आवश्यक हो गया है इसलिए यह हमारा सर्वप्रथम कर्त्तव्य बन जाता है कि हम हर तरह से पानी की एक-एक बूंद का समुचित रूप से प्रयोग करें और इसे दूषित होने से बचाएं। टपका सिंचाई प्रणाली लवणीय जल वाले क्षेत्रों में फसल पैदा करने का सबसे कुशल तरीका प्रदान करती है। टपका सिंचाई पद्धति में उत्सर्जक (ड्रिपर), लेट्रल पाइप, उपमुख्य पाइप, मुख्य पाइप, फिल्टर (छन्नक), उर्वरक अन्त: क्षेपक यंत्र तथा मोटर और पम्प आदि मुख्य भाग होते हैं। टपका सिंचाई प्रणाली में जल मुख्य पाइप, उपमुख्य पाइप व लेट्रल लाइन से होता हुआ ड्रिपर द्वारा पौधों की जड़ों तक पहुंचता है। टपका सिंचाई प्रणाली में लवणीय जल का लगातार उपयोग करने से लेट्रल लाइन और ड्रिपर में लवण जमा हो जाते हैं जिससे ये अवरुद्ध हो जाते हैं। अम्ल प्रक्रिया (Acid treatment) करके अवरुद्ध लेट्रल लाइन और ड्रिपर को खोल सकते हैं। इसके लिये वेन्चुरी असेंबली, फर्टिलाइज़र टैंक या फर्टिगेशन पम्प को उपयोग में लाया जा सकता है। अम्ल प्रक्रिया में निम्नलिखित अम्लों में से किसी एक अम्ल का प्रयोग कर सकते हैं :

क. हाइड्रोक्लोरिक अम्ल ख. सल्फ्यूरिक अम्ल
ग. नाइट्रिक अम्ल घ. फास्फोरिक अम्ल

अम्ल प्रक्रिया के अंतर्गत टपका सिंचाई प्रणाली में उपयोग होने वाले अम्लमिश्रित पानी का पी एच 4 होना चाहिए। पी एच नापने के लिये पी एच पेपर उपयोग में लाया जाता है। पी एच पेपर को अम्लमिश्रित पानी में भिगोने पर उसका रंग रंगपट्टी में ताम्र रंग से (पी एच- 4) मिलना चाहिए। जिस पानी से अम्ल प्रक्रिया करनी है, उसका पी एच अधिक होने पर उसे चार तक लाने के लिये पानी में अम्ल की मात्रा बढ़ानी चाहिए।

अम्ल प्रक्रिया करने की विधि

1. प्लास्टिक के बर्तन में एक लीटर पानी लीजिए।
2. पानी में ड्रॉपर की सहायता से 1-1 मिली लीटर अम्ल डालकर पानी का पी. एच. नापते जाइए।
3. पी. एच. चार होने तक यह प्रक्रिया जारी रखें।
4. पी. एच. चार तक लाने के लिये कितना अम्ल उपयोग में लाया गया, यह ज्ञात कीजिए।
5. सबसे पहले टपका संयंत्र के जिस प्रभाग में अम्ल प्रक्रिया करनी है, उस भाग में पंप चालू करने के बाद अंतिम ड्रिपर से पानी आने तक में कितना समय लगता है, यह नोट कीजिये और उतने समय में ही अम्ल प्रक्रिया पूरी करनी चाहिए।
6. जिस साधन से टपका संयंत्र में अम्ल डालना है, उसकी पानी चूषण दर (सक्शन रेट) की गणना करनी पड़ती है और उसे निम्नलिखित सूत्र के अनुसार ज्ञात किया जा सकता है।

   चूषण दर (लीटर प्रति घंटा)
   = संयंत्र का प्रति घंटा प्रवाह दर (घन मीटर) x पानी पी एच को चार तक लाने के लिए उपयोग लाया गया अम्ल (मि.मी.)
7. अम्ल की मात्रा निकालने के लिये ऊपर निकाली गई चूषण दर (लीटर प्रति घंटा) को 60 से विभाजित कर क्रमांक 5 में निकाली गई अवधि से गुणा करना चाहिये।

   उदाहरण : यदि 1 लीटर पानी के पी. एच. को चार तक लाने के लिये 3 मिली लीटर अम्ल का उपयोग होता है और संयंत्र का प्रवाह दर प्रति घंटा 20 घन मीटर प्रति घंटा है। यदि अंतिम ड्रिपर तक पानी पहुंचने में 12 मिनट लगते हैं तो कितना लीटर अम्ल लगेगा ?

   उत्तर : सबसे पहले चूषण दर (सक्शन रेट) लीटर प्रति घंटा निकालेंगे :

   चूषण दर (लीटर प्रति घंटा) = 20 घन मीटर प्रति घंटा प्रवाह दर x 3 मि.ली.
   = 60 लीटर प्रति घंटा

   यदि अम्ल को चूसने की गति 60 लीटर प्रति घंटा है, तब 12 मिनट में कितना अम्ल प्रयोग हुआ यह ज्ञात किया जा सकता है, इसके लिये निम्न सूत्र का उपयोग करना चहिए।

   अम्ल की मात्रा की आवश्यकता
   = अम्ल को चूसने की दर (लीटर प्रति घंटा)/60 x अंतिम ड्रिपर तक पानी पहुंचने का समय (मिनट)

   12 मिनट में अम्ल की मात्रा की आवश्यकता = (60/60) x 12 = 12 लीटर
8. अम्ल प्रक्रिया आरंभ करते ही, सबसे नज़दीक वाले ड्रिपर के पास जाकर, उससे बाहर निकलने वाले पानी की पी. एच. को चेक करना चाहिये। पी. एच. चार से अधिक होने पर वेंचुरी असेंबली के वाल्व को थोडा बंद करके चूषण दर को बढ़ाना चाहिये। पी. एच. चार से कम होने पर वेंचुरी असेंबली के वाल्व को थोडा खोलना चाहिये।
9. इसी प्रकार वाल्व को कम ज़्यादा कर पी. एच. को चार तक सेट करें।
10. अम्ल मिश्रित पानी ड्रिप संयंत्र में निर्धारित समय में पहुंचने के बाद उस भाग के सबमेन वाल्व बंद करें। संयंत्र में मौजूद क्षार को अम्ल मिश्रित पानी में घुलने में कम से कम 6 घंटे लगते हैं।
11. उसके बाद लैट्रल के अंतिम छोर को खोलिये। सबमेन फ्लश वाल्व खोलकर पंप चालू कीजिए जिससे अम्लमिश्रित पानी में घुले हुऐ क्षार संयंत्र से बाहर निकल सकें।

अम्ल प्रक्रिया करते समय नीचे दिये गये निर्देशों का ध्यान रखें :

1. तीव्र अम्ल का शरीर के किसी भी भाग पर स्पर्श होना खतरनाक हो सकता है। इसलिये अम्ल का सावधानीपूर्वक इस्तेमाल करें। अम्ल इस्तेमाल करते समय अम्ल प्रतिरोधक दस्तानों का प्रयोग करें।
2. अम्ल को पानी में डालें न कि पानी को अम्ल में।
3. अम्ल प्रक्रिया के समय गलती से अम्ल शरीर के किसी भाग पर गिर जाए तो उस पर ढेर सारा पानी डालें व डॉक्टर से सलाह लें।
4. अम्ल प्रक्रिया करने से पहले सैंड फिल्टर को बैकवॉश कर लें जिससे सैंड फिल्टर में अटका हुआ कचरा संयंत्र में नहीं जाएगा।
5. अम्ल प्रक्रिया खत्म होने पर फिल्टर की जाली व उर्वरक टैंक आदि को साफ पानी से धो लें।

एकाधिक प्रकार की बुद्धिमता

- **सुमित श्योराण, बिमला ढांडा एवं कृष्णा दुहन**
मानव विकास और पारिवारिक अध्ययन विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हर व्यक्ति बुद्धिमान होता है परन्तु प्रो. हावर्ड गडिनर ने इन बुद्धिमताओं को अलग-अलग आठ हिस्सों में बांटा है जैसे कि शारीरिक गतिसंवेदी, पारस्पारिक, आत्मीय, प्राकृतिक, तार्किक-गणितीय, सामुदायिक भाषा संबंधी और संगीत संबंधी बुद्धिमता। हर व्यक्ति में इन आठ बुद्धिमताओं में से कुछ का समूह मौजूद होता है। आइए, जानते हैं कि हम किस प्रकार से अपने बच्चे को सभी बुद्धिमताओं में परिपूर्ण बना सकते हैं :

1. **शारीरिक गतिसंवेदी बुद्धिमता :** इस तरह की बुद्धि वाले बच्चे किसी भी सूचना को अपने शरीर के हावभावों के माध्यम से आसानी से समझ पाते हैं।

- बच्चे को शरीर से अलग-अलग अंग्रेज़ी के शब्द बनाने बताएं। जैसे कि पेट को गोल-गोल घुमाकर 'O' बना सकते हैं।
- उसको किसी भी गीत पर शरीर एवं चेहरे के हाव-भाव बनाने के लिए कहें।
- उसके साथ 'बिना बोले नाम बताओ' खेल खेलें जिसमें बच्चा आपके हाव-भाव से नाम सोचकर बताने की कोशिश करें।
- अपने बच्चे को कठपुतली का नाटक दिखाकर लाएं।
- बच्चे को शरीर के सभी अंगों के बारे में विस्तार से बताएं।
- बच्चे में शुरू से ही योग करने की आदत डालें।

2. **पारस्पारिक बुद्धिमता :** इस तरह की योग्यता वाले बच्चे किसी भी दूसरे व्यक्ति के साथ बातचीत करने एवं उसे समझने में माहिर होते हैं।

- उसे दूसरों के हाव-भाव की नकल करने के लिए प्रोत्साहित करें।
- कहानी सुनाते समय अलग-अलग किरदारों की आवाज़ें प्रयोग करें।
- बच्चों को दूसरों से बातचीत करने के अलग-अलग तरीके समझाएं।
- बच्चे को कहानी, कविता, गीत सुनाते समय अपने चेहरे के हावभाव के साथ सुनाने के लिए कहें।
- उसके साथ बातचीत करते हुए अधिक से अधिक समय बिताएं।
- उसे अलग-अलग चीज़ों एवं महापुरुषों के बारे में विस्तार से बताएं।

3. **आत्मीय बुद्धिमता :** इस प्रकार के बच्चे खुद को समझने खुद के लिए निर्णय लेने एवं खुद को किसी भी कार्य को करने के लिए प्रेरणा देने में सक्षम होते हैं।

- बच्चे के साथ खुद के लिए निर्णय लेने एवं खुद को किसी भी कार्य को करने के लिए प्रेरणा देने में सक्षम होते हैं।
- उसकी पसंदीदा किताबें पढ़ें एवं उसको बीच-बीच में जीवन में आने वाली परेशानियों और तरीकों के बारे में अवगत कराएं।
- बच्चों को अलग-अलग भावनाओं जैसे सुख, दु:ख आदि के बारे में विस्तार से बताएं।
- बच्चे को मेडिटेशन एवं योगा कराएं।
- बच्चे के भाषा विस्तार की तरफ ध्यान दें।
- अपने बच्चे के लिए उसका आदर्श बनकर मार्ग दर्शन करें।

4. **प्राकृतिक बुद्धिमता :** इस प्रकार की बुद्धि वाले बच्चे किसी भी जानकारी को समझने के लिए प्राकृतिक चीज़ों का सहारा लेते हैं जैसे कि पेड-पौधे आदि।

- बच्चे के साथ पार्क जाएं और उसको वहां पर चल रही अलग-अलग गतिविधियों जैसेकि पक्षियों की चहचहाअट आदि के बारे में बताएं।
- उसको अलग-अलग पेड़-पौधों के बारे में बताएं एवं साथ ही अलग-अलग पेड़-पौधों के पत्ते इकट्ठे करें।
- बच्चे को बीज से पेड़ बनने के बारे में बताएं।
- उसे विभिन्न जानवरों के चित्रों में रंग भरने के लिए प्रोत्साहित करें।
- उसके साथ चिड़ियाघर जाएं एवं उसे विभिन्न जानवरों के बारे में अवगत कराएं।
- बच्चे को पर्यावरण के बारे में विस्तार से समझाएं।
- उसे किसी भी एक पेड़-पौधे का ध्यान रखने के लिए कहें।

5. **तार्किक-गणितीय बुद्धिमता :** इस तरह की बुद्धिमता वाले बच्चे अंकों और वैज्ञानिक विचारों को अच्छे से समझने में निपुण होते हैं।

- उसको विभिन्न वस्तुओं के साथ जोड़, घटा, गुणा एवं भाग सिखाएं।
- उसे पहेली सुलझाने के लिए प्रोत्साहित करें।
- अपने बच्चे को गिनती, अक्षर इत्यादि संगीत के साथ याद करवाएं।
- बच्चे को अलग-अलग चीज़ों का वर्गीकरण करने के लिए कहें।
- उसको आकार एवं आकृतियों के बारे में समझाएं और उसे चीज़ों को देखकर अलग-अलग भागों में बांटना सिखाएं।
- उनको गिनती मिलाकर रंग से किसी भी आकार को बनाने के लिए कहें।
- बच्चे को अंकों की गिनती पर डांस करना सिखाएं।

6. **सामुदायिक बुद्धिमता :** इस प्रकार की योग्यता वाले बच्चे चीज़ों को सामने से देखकर जल्दी समझने में माहिर होते हैं।

- बच्चे को अलग-अलग उदाहरणों के साथ कहानी सुनाएं।
- किसी भी आकृति के साथ उसका नाम लिखकर चित्र बताएं और बच्चे को भी इसी प्रकार से करने के लिए प्रोत्साहित करें।
- बच्चे को आँखे बंद कर चीज़ें सिर्फ छूकर पहचानने के लिए कहें।
- बच्चे के साथ 'छिपा खजाना ढूंढो' खेल खेलें। इसके लिए बच्चे को मैप बनाकर समझाएं।
- घर की अलग-अलग वस्तुओं के आकार और उसके रखने की जगह के बारे में अवगत कराएं।
- अपने बच्चे के साथ ब्लॉक बनाएं।

7. **भाषा संबंधी बुद्धिमता :** इस प्रकार की योग्यता वाले बच्चे अलग-अलग बातों को विभिन्न शब्दों और भाषाओं में व्यक्त करने में निपुण होते हैं।

- बच्चे को 'नरम-नरम' शब्द और उनका अर्थ समझाएं।
- बच्चे की पसंदीदा कहानियों की किताब पढ़ें एवं उसमें हर एक शब्द का अच्छे से उच्चारण करें।
- बच्चे के साथ मिलकर नई-नई शब्द पहेलियां बनाएं।
- बच्चे को समान अर्थ और विपरीत अर्थ के बारे में समझाएं।

- अपने बच्चे को किताबें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें।
- अपने बच्चे को अलग-अलग भाषाओं का ज्ञान दें।

8. **संगीत संबंधी बुद्धिमता :** इस प्रकार के बुद्धि वाले बच्चे किसी भी जानकारी को अलग-अलग आवाज़ों एवं संगीत संबंधी प्रोत्साहन के जरिए जल्दी ही समझ पाते हैं।
- बच्चे को कविता गीत (गीत गाकर) सुनाएं। ध्यान रखें कि कविता या गीत के बोल आपके बच्चे को सही से समझ में आएं।
- बच्चे के साथ समय व्यतीत करें।
- उसके साथ वार्तालाप करते समय चेहरे पर भाव लाएं।
- उसको शाम को पार्क वगैरह लेकर जाएं एवं उसे पार्क में होने वाली अलग-अलग गतिविधियों के बारे में अवगत कराएं।
- अपने घर पर भी अलग-अलग वस्तुओं से संगीत बजाएं जैसे कि चम्मच और पानी की कटोरी के साथ।
- बच्चों को अलग-अलग भाषाओं का ज्ञान दें।
- रात्रि के समय बच्चे को कहानी गाकर सुनाएं। इससे आपके बच्चे का किसी भी बात को बयां करने की प्रवृत्ति में सुधार होगा।
- अपने बच्चे को अलग-अलग पक्षियों आदि की आवाज़ को नकल करने के लिए प्रोत्साहित करें।

किसानों के लिए आवश्यक सूचना

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने 8 अगस्त, 2018 को SO.3951(ई) के तहत एक सूचना जारी की है कि 12 कीटनाशक (इनसेक्टिसाइड्स+ फंजीसाइड्स+हर्बीसाइड्स) का प्रयोग/इस्तेमाल 8 अगस्त 2018 से ही बन्द कर दिया गया है। अन्य छः कीटनाशकों का प्रयोग 31 दिसम्बर, 2020 से बन्द कर दिया जाएगा। इनकी सूची इस प्रकार है:

8 अगस्त, 2018 से प्रतिबंधित कीटनाशक

1. **बेनोमाईल** (Benomyl)
2. **कार्बाराइल** (Carbaryl)
3. **डायजिनॉन** (Diazinon)
4. **फेनारिमोल** (Fenarimol)
5. **फेन्थियॉन** (Fenthion)
6. **लिन्यूरॉन** (Linuron)
7. **मैथॉक्सी इथाइल मरकरी क्लोराइड** (Methoxy Ethyl Mercury Chloride)
8. **मिथाइल पैराथियॉन** (Methyl Parathion)
9. **सोडियम सायनाइड** (Sodium Cyanide)
10. **थियोमेटॉन** (Thiometon)
11. **ट्रायडमॉर्फ** (Tridemorph)
12. **ट्राइफ्लूरालिन** (Trifluralin)

नोट : किसी भी लेख में अगर इन कीटनाशकों के प्रयोग के बारे में लिखा है तो उसे रद्द माना जाए।

अपना पोषण अपने हाथ - पोषण वाटिका : एक आसान उपाय

- **पूनम, अशोक ढिल्लों एवं संतोष रानी**[1]
कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

देशव्यापी आहार सर्वेक्षणों से पता चलता है कि भारतीय आहार में सब्जियों, फलों युक्त खाद्य पदार्थों के कम सेवन के कारण प्रोटीन की तुलना में विटामिन और खनिज लवणों की अत्यधिक कमी है। कृषि क्षेत्र खाद्यान्न सुरक्षा की गारन्टी अवश्य देता है, किन्तु पोषण सुरक्षा चिन्ता का विषय बना हुआ है। भारतीय मेडिकल अनुसंधान परिषद् (आई. सी. एम. आर.) के अनुसार प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति को 300 ग्राम सब्जी की आवश्यकता पड़ती है :

हरी पत्तेदार सब्जी (ग्राम में)	जड़/कंद वर्गीय सब्जी (ग्राम में)	अन्य सब्जी (ग्राम में)
100	100	100

हमारे देश में यह 175 ग्राम प्रतिदिन ही प्राप्त होता है। ऐसे में यदि पोषण वाटिका सब्जियों की पूर्ति के लिए लगाई जाए तो यह मील का पत्थर साबित होगी। हमारे देश में पुराने समय में घर के पिछवाड़े या आस-पास खाली ज़मीन में घरेलू उपभोग के लिए साग-सब्जियां और फलदार पेड़ लगाने का प्रचलन गांव में ही नहीं शहरों में भी था। पोषणवाटिका अर्थात् गृह वाटिका उस वाटिका को कहा जाता है, जो घर के अगल-बगल और घर के आंगन में ऐसी खाली जगह पर होती है, जहां पारिवारिक श्रम से परिवार के इस्तेमाल हेतु विभिन्न ऋतुओं में मौसमी फल और सब्जियां उगाई जाती हैं।

पोषण वाटिका के मुख्य तीन लाभ हैं :

1. **स्वास्थ्य :** पोषण वाटिका से परिवार एवं पड़ोसियों को तरोताज़ी हवा, प्रोटीन, खनिज एवं विटामिनों से युक्त फल व सब्जियां प्राप्त होती हैं। साथ ही वाटिका में कार्य करने से शारीरिक व्यायाम भी होता है जिससे परिवार के सभी सदस्य स्वस्थ एवं प्रसन्न रहते हैं।

2. **समृद्धि :** प्रत्येक परिवार में औसत 50 से 100 रुपए की सब्जी एवं फल प्रतिदिन बाज़ार से खरीदे जाते हैं। इस प्रकार प्रति माह हम 1500-3000 रुपए की बचत कर सकते हैं। इससे आप अपने परिवार का भोजन संबंधी बजट तैयार कर सकेंगे और आपकी आर्थिक बचत में भी सहायता मिलेगी।

3. **बुद्धिमता :** स्वयं की मेहनत एवं पसीने से उपजी हरी-भरी तरो-ताज़ा सब्जियों को देखकर आपका मन प्रसन्न होगा। इसके अतिरिक्त सब्जियां खरीदने के लिए बाज़ार में जाने का आपका बहुमूल्य समय एवं पैसा भी बच जाता है। इस प्रकार पोषण वाटिका स्थापित करना परिवार के स्वास्थ्य एवं समृद्धि के लिए महत्वपूर्ण कदम साबित होगा।

सब्जियों में पाये जाने वाले पौष्टिक तत्व :

पौष्टिक तत्त्व	प्रमुख सब्जियां
कार्बोहाइड्रेट	आलू, शकरकंद, अरबी, चुकुन्दर, आदि
प्रोटीन	मटर, सेम, फ्रेंचबीन, लोबिया, ग्वार, चौलाई आदि
विटामिन-ए	पत्तागोभी, गाजर, टमाटर, पालक, सरसों का साग, चौलाई, धनिया, पुदीना, बथुआ, करी पत्ता आदि

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद।

विटामिन-ई	हरी पत्तेदार सब्जियां, सलाद, शलजम के पत्ते आदि
विटामिन-के	सलाद, सेम, बंदगोभी, टमाटर, मेथी, आलू आदि
विटामिन-सी	केला, शिमला मिर्च, हरी मिर्च, सरसों का साग, धनिया, टमाटर, शलजम, फूलगोभी, करेला, मूली के पत्ते आदि
विटामिन बी 1	फूलगोभी, पालक, भिण्ड़ी, सरसों का साग, लोबिया, टमाटर, गाजर आदि
विटामिन बी 2	सलाद पत्ता, बैंगन, फूलगोभी, अरबी, चौलाई, बथुआ, पालक, सेम, भिण्ड़ी, सरसों का साग, लोबिया, टमाटर आदि
कैल्शियम	चुकुन्दर, चौलाई, मेथी, धनिया, कद्दू, प्याज़, टमाटर आदि
पोटैशियम	शकरकंद, आलू, करेला, मूली, सेम, प्याज़, ककड़ी आदि
फॉस्फोरस	लहसुन, मटर, करेला आदि
लौह	करेला, चौलाई, मेथी, पुदीना, पालक, मटर आदि

पोषण वाटिका में कब और क्या लगाएं

पोषण वाटिका में शाक-सब्जियों को तीन बार बोया जा सकता है, जो क्रमवार निम्नलिखित हैं :

खरीफ वाली सब्जियां : इन्हें जून-जुलाई में बोया जा सकता है। इस समय भिंड़ी, लौकी, करेला, टिंडा, तोरई, बैंगन, टमाटर, ग्वार, लोबिया, मिर्ची, अरबी आदि सब्जियों की खेती की जा सकती है।

रबी वाली सब्जियां : इन्हें सितंबर-अक्तूबर में उगाया जा सकता है। इस समय बैंगन, सरसों, मटर, प्याज़, लहसुन, आलू, टमाटर, शलजम, फूलगोभी, बंदगोभी, चना आदि सब्जियों की खेती की जा सकती है।

जायद वाली सब्जियां : इन्हें फरवरी-मार्च में उगाया जा सकता है। इस समय भिंड़ी, ककड़ी, खीरा, लौकी, तोरई, टिंडा, अरबी, तरबूज, मतीरा, खरबूजा, बैंगन आदि सब्जियों की खेती की जा सकती है।

पोषण वाटिका का प्रबंधन : सामान्यत: सब्जियों की बुवाई दो तरीकों से की जा सकती है - पौधशाला तैयार करके (टमाटर, बैंगन, मिर्च, प्याज़, गोभी वर्गीय सब्जियां) एवं सीधे बुवाई (खीरा वर्गीय सब्जियां, मूली, बीन इत्यादि)

पोषण वाटिका का नक्शा व रेखांकन

1. पोषण वाटिका के लिए भूखण्ड ऐसा हो जहां दिन में अधिक समय तक धूप मिले।
2. दक्षिण की तरफ खुला हो, कोई दीवार की छाया न पड़े।
3. एक परिवार (5-6 सदस्य) के लिए सब्जियों की आवश्यकता पूरी करने के लिए 250 वर्गमीटर का क्षेत्र पर्याप्त रहेगा। इसमें 8-10 वर्गमीटर की सुविधानुसार क्यारियां निर्मित कर मनपसन्द सब्जियां लगाएं।
4. नलकूप के आस-पास के स्थान का उपयोग।
5. बाड़ का उपयोग बेल वाली मौसमी सब्जियां जैसे- लौकी, करेला, कद्दू, सेम आदि के लिए कर सकते हैं।
6. भूखण्ड़ के एक कोने में कम्पोस्ट/जैविक खाद हेतु एक गड्ढ़ा बना सकते हैं जिसमें रसोई के व्यर्थ पदार्थ डालकर कम्पोस्ट खाद बना सकते हैं।
7. वाटिका के चारों तरफ सुरक्षा के लिए कांटों वाली घनी झाड़ी के रूप में बेर, करौंदा, नींबू आदि के लगाने के साथ बांस अथवा कंटीली तारों का उपयोग कर बाड़ लगाई जा सकती है जिससे जानवरों द्वारा खाने से बचाया जा सके।
8. सब्जियों व फलों को कीटों व रोग से बचाने के लिए जैविक कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए। नीमयुक्त कीटनाशकों, नीम - राख आदि का उपयोग करना उत्तम है।
9. पोषण वाटिका में बीचों बीच एक मीटर चौड़ा रास्ता बनायें व दोनों तरफ छोटी-2 क्यारियां निकालें।
10. सब्जियां पंक्ति में निश्चित दूरी पर लगायें जिससे निराई-गुड़ाई आसानी से हो।
11. बीज तथा पौध अच्छे विश्वसनीय स्त्रोत से लें।
12. औषधीय गुणों वाले पौधे जैसे तुलसी, पुदीना, ग्वारपाठा, अजवाइयन, सौंफ आदि भी अवश्य लगाएं।

पोषण वाटिका के लाभ

- जैविक उत्पाद (रसायन रहित) होने के कारण फल व सब्जियों में काफी मात्रा में पोषण तत्त्व मौजूद रहते हैं।
- बाज़ार में सब्जियों की कीमत अधिक होती है, जिसे न खरीदने से अच्छी खासी बचत होती है।
- परिवार के लिए ताज़ा फल - सब्जियां मिलती रहती हैं।
- वाटिका की सब्जियां बाज़ार के मुकाबले अच्छे गुणों वाली होती हैं।
- पोषण वाटिका लगाकर महिलाएं अपनी व अपने परिवार की आर्थिक स्थिति को मज़बूत बना सकती हैं।
- पोषण वाटिका से प्राप्त मौसमी फल व सब्जियों को परिरक्षित कर के सालभर इस्तेमाल किया जा सकता है।
- यह बच्चों के प्रशिक्षण का भी अच्छा साधन है।
- यह मनोरंजन और व्यायाम का भी एक अच्छा साधन है।
- मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी खुद उगाई गई फल-सब्जियां बाज़ार की फल सब्जियों से अधिक स्वादिष्ट लगती हैं।

पोषण वाटिका निर्माण के आर्थिक लाभ

व्यक्ति पहले अपने परिवार का पोषण करता है, उसके बाद बेचता है। आवश्यकता से अधिक होने पर उत्पाद को बाज़ार में बेच देता है या उसके बदले दूसरी सामग्री प्राप्त कर लेता है। कुछ मामले में पोषण वाटिका आय सृजन का प्राथमिक उद्देश्य बन सकता है। अन्य मामले में यह आय सृजन का उद्देश्य के बजाय पारिवारिक सदस्यों के पोषण लक्ष्य को पूरा करने में मदद करता है। इस तरह पोषण वाटिका आय सृजन और पोषाहार का दोहरा लाभ प्रदान करता है।

हाइड्रोजेलः कम पानी में अधिक उपज

- श्वेता एवं मनु
सस्य विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पानी की कमी की वजह से किसानों की परेशानियां बढ़ती जा रही है जिस कारण भविष्य में खेती करना मुश्किल हो रहा है और भुखमरी एवं गरीबी बढ़ती जा रही है। इन्हीं समस्याओं से छुटकारा दिलाने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा हाइड्रोजेल (सुपर अवशोषक) तैयार किया गया है जो सूखाग्रस्त क्षेत्रों में खेती करने में मददगार साबित हो रही है। इसका प्रयोग ऐसे स्थानों पर किया जाता है जहां पानी की कमी होती है या सिंचाई के लिए उपलब्ध साधन नहीं मिल पाते। पानी की कमी की वजह से किसानों को पानी खरीदना पड़ता है और इससे लगात भी बढ़ जाती है।

हाइड्रोजेल एक ऐसी जेल है जो पानी में मिलते ही अधिक मात्रा में पानी को अपने अंदर तक सोख लेता है। यह पौधों की जड़ों के पास रहता है क्योंकि जड़ों में ही पानी की सबसे ज्यादा कमी रहती है। इसका उपयोग आप 3-4 बार कर सकते हैं। इससे आपके खेतों को कोई नुकसान नहीं होता। एक एकड़ में 2-3 किलो हाइड्रोजेल की ही आवश्यकता पड़ती है तथा 40-50 डिग्री सेल्सियस तापमान पर भी यह खराब नहीं होती। कृषि हाइड्रोजेल मिट्टी के भौतिक गुणों को बदल सकता है। यह मिट्टी की पानी धारण करने की क्षमता में वृद्धि करता है एवं मिट्टी के कटाव और अपवाह को भी कम करता है। सिंचाई की आवृत्ति (नम्बर) को कम करने में सहायक है। पौधों की पानी की आवश्यकता को कम करने में सहायक है तथा पानी की गुणवत्ता को बढ़ाता है। इसको उपयोग करके खारा एवं कठोर पानी की अवशोषण क्षमता को बढ़ा सकते हैं। इसकी कीमत भी कम होती है। पानी के पीएच मान को नियंत्रित करने में सहायक होता है। यह एक बार पानी को अवशोषित कर उसे कई दिनों तक पौधों में पर्याप्त नमी बनाए रखता है।

कृषि में सुपर अवशोषक का अनुप्रयोग : हाइड्रोजेल एक मिट्टी योजक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके अलावा, हल्की मिट्टी की जल-धारण क्षमता को बढ़ाते हुए सुपर शोषक पॉलिमर भारी मिट्टी की पारगम्यता समस्याओं और उर्वरकों में कठिनाइयों का समाधान कर सकता है। सिंचित मिट्टी के मामले में वे सिंचाई अंतराल बढ़ाते हैं। इसकी मात्रा मिट्टी की भौतिक स्थितियों, क्षेत्र की जलवायु और मिट्टी में सुपर अवशोषक की उपयोग राशि पर निर्भर करती है। सुपर अवशोषक का मिट्टी पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है, और मिट्टी में विषाक्त नहीं माना जाता है। पानी को बनाए रखने के अतिरिक्त निरंतर मात्रा परिवर्तन (पानी खोने के दौरान मुद्रास्फीति और संकुचन के दौरान विस्तार) के कारण सुपर अवशोषक मिट्टी में हवा की मात्रा में वृद्धि करेंगे। ये यौगिक कुछ प्रकार के उर्वरकों के बेहतर प्रदर्शन और मिट्टी के सूक्ष्मजीवों की बेहतर गतिविधियों का कारण बनेंगे।

सुपर शोषक पॉलिमर : सामग्री अपने शुरुआती मोनोमर्स पर वापस नहीं लौट सकती, यानी वे वैज्ञानिक रूप से विषाक्त आरंभ करने वाली सामग्री के लिए अपरिवर्तनीय हैं। दुनिया भर में अनुसंधान ने मिट्टी की सूक्ष्म आबादी पर कोई कम या लगातार प्रतिकूल प्रभाव नहीं दिखाया है। हाइड्रोजेल की अनुशंसित अनुप्रयोग दर बहुत कम है यानी अधिकांश फसलों के लिए 2.5 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर, जोकि मिट्टी के 2.5 पीपीएम प्रति यूनिट वजन के बराबर है। यह उपज में 10-50 प्रतिशत, फल के आकार और रंग में वृद्धि कृषि उपज की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार और पौधों के बायोमास में वृद्धि करती है।

जागरूक उपभोक्ता - समय की आवश्यकता

- कुसुम राणा व सुमन मलिक
कृषि विज्ञान केन्द्र, झज्जर
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कोई भी व्यक्ति जो स्वयं के उपयोग के लिये, परिवार, व्यापार आदि के लिये कोई भी सामान खरीदता है अथवा किसी सेवा जैसे फोन, चिकित्सा सेवाएं, बैंक बीमा आदि का उपयोग करता है - उपभोक्ता कहलाता है। खान-पान की वस्तुओं में नित नई मिलावटों का पाया जाना, भ्रामक विज्ञापन, गलत माप-तोल, नकली वस्तुएं, गांरटी एवं वारंटी के बावजूद सर्विस का न देना, ऑन-लाईन शापिंग कार्ड आदि अनेक कारण है जिसके लिये हमें सजग उपभोक्ता बनने की आवश्यकता है ताकि बाजार में प्रचलित विभिन्न कुरीतियों से बचाव हो सके।

सजग उपभोक्ता बनने के लिये खरीददारी करने जाने से पहले सूची बना लें ताकि आनावश्यक सामान खरीदने से बचा जा सके। जहां तक संभव हो खाद्य पदार्थ मौसम के अनुसार ही खरीदें। उस समय वस्तुएं न केवल सस्ती होती है अपितु अच्छी भी मिलती हैं। केवल भली प्रकार से डिब्बावंद व लेबल लगी वस्तुएं ही खरीदें। एगमार्क, आईएसआई, एफपीओ मार्क, भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) जैसे गुणवत्ता चिन्ह पदार्थों की गुणवत्ता सुनिश्चित करते हैं। डिब्बे पर उत्पादनकर्ता का नाम, पता, बनाने की तारीख, इसे कब तक प्रयोग कर सकते हैं तथा अधिकतम खुदरा मूल्य क्या है, इत्यादि को देख कर ही सामान खरीदें। खाद्य पदार्थों में रंग का प्रयोग हानिकारक है। जहां तक संम्भव हो कृत्रिम रंगों से बनी मिठाईयों का सेवन न करें। त्यौहार व शादी-ब्याह के मौसम में मावा से बनी मिठाईयों, पनीर को न खरीदें व न ही किसी को उपहार में दें।

सामान के साथ मिले गांरटी-वारंटी कार्ड को संभाल कर रखें पक्का बिल लें व बिल पर दुकानदार की मोहर व हस्ताक्षर अवश्य लें। दुकानदार की सामान बेचने की विभिन्न तरकिबों जैसे सेल, मुफ़्त उपहार आदि से सजग रहें। कुछ दुकानदार, दुकान पर नोटिस लगा देते हैं या कहते हैं कि बिका हुआ माल वापिस नहीं होगा। यह गलत है और कानून के विरूद्ध है। आप क्षतिपूर्ति के लिये उपभोक्ता फोरम में केस दर्ज करवा सकते हैं।

यदि उपभोक्ता 20 लाख रुपए तक की भरपाई की मांग करते हैं तो वे जिला फोरम में, 20 लाख रुपए से 1 करोड़ तक राज्य फोरम में तथा 1 करोड़ रुपए से अधिक मांग हेतु राष्ट्रीय फोरम में अपनी शिकायत दर्ज करवा सकते हैं। राष्ट्रीय फोरम से असंतुष्ट होने पर सर्वोच्च न्यायालय में तीन माह में याचिका दर्ज की जा सकती है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अर्न्तगत उपभोक्ता को निम्न राहत मिल सकती है जैसे - वस्तुओं से त्रुटियों को दूर करना; वस्तुओं को बदल देना; पैसों की वापसी एवं दुर्घटना होने पर क्षतिपूर्ति।

उपभोक्ता शिकायत दर्ज कैसे करें

उपभोक्ता निम्नलिखित जानकारी के साथ जिला फोरम में अपनी याचिका दायर कर सकते हैं : याचिकर्ता का नाम, पता एंव विवरण; प्रतिवादी पक्ष का नाम पता एवं विवरण; शिकायत से संबंधित तथ्य जैसे कि व्यापारिक दुर्व्यवहार, कब और कहां हुआ; शिकायत से संबन्धित दस्तावेज, यदि कोई है; एवं मांगी गई राहत-क्षतिपूर्ति इत्यादि।

जो भी प्रमाण याचिका में संलग्न करें, उनकी एक कांपी अपने पास रखें तथा डाक व कोरियर से भेजने की तारीख नोट करे लें।

Care of Newborn Calf

- **Swati Ruhil and Vikas Khichar**[1]
Haryana Pashu Vigyan Kendra (HPVK), Uchani, (Karnal)
Lala Lajpat Rai University of Veterinary & Animal Sciences, Hisar

The first hour after birth is very crucial time for the newborn calf. Proper care and management during this period can decrease the incidence of calf diseases and mortality. Hence, the following points must be taken in consideration after the birth of newborn :

1. **Respiration management** : The first step after the birth should be cleaning of the mucus present in nostrils and mouth to avoid any breathing problems.
2. **Navel cord management** : Navel cord should be tied at about 2 inches from the base and cut with sterile scissors or blade. It should be dipped in 7% Tincture Iodine solution to prevent infections.
3. Allow the dam to lick and clean the calf as it stimulates the calf's blood circulation and encourages it to stand up and walk.
4. Clean the dam udder before allowing the calf to suckle.
5. **Colostrum feeding** : Calf should feed colostrum within half to one hour of birth at about 10% of calf body weight upto a maximum of 5-6 litres per day. Feeding of colostrum after 24 hours of birth doesn't provide sufficient immunity as absorption of immunoglobulins present in colostrum decreases with time.
6. **Identification** : After the birth identification of calf should be done either by ear tagging or any other approved method for easy record keeping and monitoring.
7. **Water** : Adequate supply of clean water should be provided.
8. **Deworming** : Deworning should be done within 15 days of age thereafter every month upto six months then every three months.
9. **Dehorning** : Dehorn the calf within 15 days after birth either chemically or by use of electric dehorner to facilitate the management and handling.
10. **Calf starter** : To ensure better growth and early maturity calf starter should be feed from 2-8 week of age. An ideal example of calf starter is: Maize- 52; Oats- 20;Soyabean meal- 20; Molasses- 5; Salt- 0.5; Mineral mixture- 1.5 and Vitamins- 1 per cent, respectively.
11. **Vaccination**: At three month of age, consult the veterinarian for the vaccination of calf.

During first week of life calf is susceptible to many infections like navel ill, calf scour, pneumonia, etc. which accounts for 20% of calf mortality. So, adequate colostrum feeding and managemental practices are essential for calf survival.

[1]Government Veterinary Hospital, Dhab Dhani, Bhiwani

Micro-propagation : A Tissue Culture Approach in Sugarcane

- **Sudhir Sharma, Upender Balyan and Lokesh Yadav**
Regional Research Station, Karnal
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

The production of quality seed through micro-propagation technique is well recognized now. The sustained high production of sugar per unit area depends primarily on continuous supply of adequate quantity of good quality seed cane, which has to be genetically pure, free from diseases, pests and with no nutritional disorders. This can only be achieved by applying the tissue culture techniques. Since the plants are free from infections, so the original vigour of the newly bred variety is maintained. Sugarcane is a vegetatively propagated crop and is cultivated through stem cuttings using 3-budded 'setts'. Diseases like red rot, leaf scald, ratoon stunting ; grassy shoot and mosaic are carried to succeeding crops through infected seeds. Thus, heavy financial losses occur annually on account of reduction in cane yield and sucrose recovery. In this context, use of healthy seed of recommended varieties through hot air treatment/and shoot tip culture technique becomes exceedingly important. The conventional mode of seed multiplication has a multiplication rate of 1: 8-10. As a result, a new variety takes 7-8 years to saturate the command area. Micro-propagation offers a thousand-fold rate of multiplication and is, therefore, the quickest available method in sugarcane .In a nutshell, micro-propagation in sugarcane provides a rapid technique of providing healthy seed of new varieties and rejuvenates old run-down varieties. The technology is not only economically viable but profitable as well.

The micro propagation technique involves the following steps :

A. Collection of explant and sterilization : Actively growing tops (shoots) are collected from 3-4 months old crop. Tops with the growing apices are cut approximately 10 cm long. Outer sheaths are removed by wiping the sheath with rectified spirit. The shoots are then washed with soap water for about 2-3 minutes followed by several changes of water. The plant segment is then thoroughly rinsed in 70% ethanol for one minute. Disinfection is done by treating with chlorine water or sodium hypo-chloride solution for 10-15 meters. The smell of chlorine is removed by 3-4 washings of sterile water under aseptic condition.

B. Initial explant culture : The isolation of shoot apex meristem is done under laminar flow by carefully removing the outer whorls of the developing leaves. The apical dome

along with surrounding leaf primordia is excised with the help of sterile sharp blade. The explant is then placed aseptically on modified Murashige and Skoog medium for initial explant culture over filter paper bridge or cotton swab.

C. Multiplication : The elongated explants are transferred to the multiplication medium that forms 2 to 5 shoots in first multiplication cycle of about 45 days. The proliferation in the second (first sub-culture) cycle occurs at the highest rate, 5 to 9 fold, which gradually declines in subsequent cycles, 3 to 5 fold in the last 7 cycle. Shoot tip or meristem culture produces normal plants upto 7 cycles of multiplication. After 7 cycles, a green mass, sometimes, starts to appear at the base of the formed shoots, which produces abnormal shoots. Therefore, it is recommended not to go beyond 7 sub-cycles of sub-culturing. The number of resulting shoots under favourable conditions may produce 36,000 to 75,600 plants, depending on the genotype in a period of four and a half months. The basal Murashige and Skoog medium (1962) along with suitable concentration of auxin and cytokinin is used for multiplication.

D. Rooting : Rooting of plants is achieved by transferring the individual or group of plants in rooting medium. A special rooting medium has been developed for inducing root formation. Root initiation is visible in a week in many genotypes and three weeks in all the genotypes and the rooted plantlet is then ready to transfer to potting mixture for hardening.

E. Transfer to pots/field (hardening/acclimatization) : The plants are taken out from vessels in a cool and shaded area. One variety should be taken at a time and processed at the earliest. The plant-containing vessel is first inspected. If there are signs of root rotting or leaf rotting, the damaged plants with the container are to be discarded. Planting of tissue culture plants should be done in cool hour's i.e morning or afternoon. The rooted plants are taken out from bottles, washed properly under running water to remove the slimy medium attached with the roots and excess roots are trimmed before transfer. A mixture of sieved sterilized soil and sand in the ratio of 2:1 should be used for transplanting. Plantlets should be immediately watered after transplanting in trays or pots and shifted to a misting chamber. With the sprouting of the first true leaf on six day, the misting is replaced by manual watering. If necessary, preventive measures for pest control should be applied. The hardening process takes about 20-30 days. The hardened plant is transplanted in the field in trenches at a distance of 45 or 60 cm within row and 90 cm between rows. This may vary with genotype. Immediately after transplanting, irrigation should be given. Intercultural operations in crop raised through tissue culture are similar to conventional method. The seed from this crop can be multiplied further for one generation using STP (1:40) technique and thereafter, can be given for commercial cultivation.

F. Merits of Micropropogation

1. Quick multiplication (one shoot apex : several thousand plants)
2. Disease-free material
3. True-to-type plants
4. Easier transport
5. Low gestation period for exploiting new varieties
6. Rejuvenation of old varieties
7. Germplasm storage
8. Micropropagated plants are more vigorous, give higher cane yield and sucrose percentage. The quality of seed produced by this technique can be maintained for 3-5 years with proper monitoring.

G. Scope

1. Sugarcane is a vegetatively propagated crop and normally requires 7-8 years or even more, for a newly developed variety to spread at large scale. During this period, deterioration of various yield and quality characteristics is inevitable prior to commercial use on account of systemic infections during vegetative multiplication. Tissue culture method (micro-propagation) is the only alternative approach for fast multiplication of a variety in its original form.
2. Micro-propagation is very effective in rejuvenating/ reviving the well adapted promising local cultivars facing gradual decline or degenerating in yield and vigour by freeing them from diseases due to accumulation of viruses and other systemic pathogens during prolonged vegetative cultivation. Unfortunately, MHAT (Moist Hot Air Treatment) is not effective against mosaic virus. The meristem culture is the only method to remove the SCMV (Sugarcane Mosaic Virus) as the meristematic tissue remains free from virus disease.
3. Considering the above advantages, micro-propagation has an important role to play in seed production programme of sugarcane.

Water in Agricultural Development and Food Security

- **Vijay[1] and Sube Singh**
Directorate of Extension Education
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Peri-urban Agriculture may also be known as peri-urban farming or gardening. It is a practice of doing agriculture in or around a town or city indicating areas along the urban-rural continuum. The fruit, vegetable, aromatic and medicinal herbs, ornamental plants, bee-keeping, dairy and fishery production may easily be carried out in the adjoining areas of National Capital and State Capital regions, especially in response to the daily demand of consumers within cities like Chandigarh, Panchkula, Delhi, Faridabad, Gurugram, etc. Often the more perishable and relatively high-valued products and by-products are favoured. The importance of peri-urban agriculture is increasingly being recognized by international organizations like UN-Habitat and FAO (World Food and Agriculture Organization) due to contributions of peri-urban agriculture to urban food security and nutrition.

Need and importance : The rapid urbanization in the past years in Haryana and increasing population with exponential rate resulted into the decreased cultivable land. The demand for fresh vegetables, fruits, aromatic and medicinal herbs, ornamental plants and milk products is constantly increasing in urban areas and peri-urban agriculture can fulfill this demand ensuring food security and can contribute to price stabilization through the development of important local food production centres of the diversified food system. This will prevent the conversion of agricultural land near urban areas into cities and towns. Degraded open spaces and vacant land adjacent to the cities are often used as informal waste dumpsites and are a source of health problems. Peri-urban agriculture contributes to disaster risk reduction and adaptation to climate change by reducing runoff, keeping flood plains free from construction, reducing urban temperatures, capturing dust and carbon dioxide. Growing fresh food close to consumers reduces energy spent in transport, cooling, processing and packaging. This will reduce the burden on transport and help in reducing greenhouse gas emissions from cold storage by increasing carbon sequestration. Peri-urban agriculture may be an integral part of the urban ecological system and can play an important role in the urban environmental management system. For most of the cities, the disposal of wastes has become a serious problem. The urban waste may be used as compost and sewerage water after treatment as irrigation for this peri-urban agriculture, which otherwise increasing air and water pollution in densely populated cities. This will also help in creating attractive employment option for poor urban residents and slum dwellers as labourers. In addition, compost-making initiatives create employment and provide income for the urban poor. Next to food security, peri-urban agriculture contributes to local economic development, poverty alleviation and social inclusion of the urban poor and women in particular.

Economic impacts : Growing food reduces the load on food import and saves household expenditures on food and poor people in these cities generally spend a substantial part of their income on food. Beside this, peri-urban agriculture stimulates the development of related micro-enterprises, the production of necessary agricultural inputs and the processing, packaging and marketing of outputs. Special attention is needed for the strengthening of the linkages between various types of enterprises in clusters or chains. The municipality and urban authority can play a crucial role in stimulating micro-enterprise development related to peri-urban agriculture like providing marketplaces for peri-urban growers, etc.

Social impacts: Peri-urban agriculture may function as an important strategy for poverty alleviation and social integration particularly, among the groups such as orphans, disabled people, women, recent immigrants without jobs, or elderly people, with the aim to integrate them more strongly into the urban network and to provide them with a decent livelihood so that they may feel enriched by the possibility of working constructively.

Challenges : There are chances of competition for resources with other urban sectors, aspects of agriculture that may be unpleasant for city dwellers and quality of inputs must be monitored. Wise resource allocation is a quintessential struggle for agriculture, and is especially greater for peri-urban agriculture than rural agriculture due to its proximity to greater number of people and to existing stresses on the urban environment. Peri-urban agriculture uses land, water, labour and energy that might be used by other urban economic sectors.

- Some aspects arisen due to peri -urban agriculture may be unpleasant for urban residents, including smells, pollution and disease.
- If dairy is promoted in proximity of cities, the management of animal waste can be challenging, since manure may contain chemicals and heavy metals unsuitable for use as fertilizer and may even be hazardous.
- Pathogens may be harmful from live animals in close proximity to dense human populations.
- Sewerage water, if not treated properly before

contd. on page 32

[1]SRF, Subhash Chandra Foundation Project (IDV), KVK, Sadalpur

ग्वार : एक गुणकारी फसल

- **यश पाल सिंह सोलंकी, बी. पी. राणा एवं मीनाक्षी सांगवान**
कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

ग्वार का अत्यधिक औद्योगिक महत्व है एवं कुल उत्पादन का लगभग 90 प्रतिशत निर्यात किया जाता है जो कि कपड़ा, कागज़, शृगांर, खनन, खाद्य पदार्थ, तेल, गैस व विस्फोट उद्योगों में प्रयोग किया जाता है। विश्व के सम्पूर्ण ग्वार उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत उत्पादन भारत व पाकिस्तान में होता है। भारत में भी राजस्थान तथा इसके सीमावर्ति राज्यों जैसे हरियाणा, पंजाब, गुजरात के शुष्क क्षेत्र ग्वार उत्पादन के मुख्य क्षेत्र हैं।

उन्नत किस्में

किस्म	पकने की अवधि (दिन)	पैदावार (क्विं./एकड़)	विशेषता
एच.जी. 75	110-115	7-8	बीमारी सहन करने व अधिक गोंद देने वाली किस्म।
एच.जी. 365	85-110	6.5-7.5	कम समय में पकने वाली व बीमारी सहनशील किस्म।
एच.जी. 563	85-100	7-8	कम समय में पकने वाली, सभी बीमारियों की प्रतिरोधी किस्म।
एच.जी. 870	100 - 105	7-8	यह किस्म सभी बीमारियों के प्रति सामान्यत: प्रतिरोधी है।
एच.जी. 2-20	85-100	8-9	मोटा दाना व खेत में न गिरने वाली किस्म।

भूमि व इसकी तैयारी : भूमि मध्यम से हल्की तथा अच्छी जल निकास वाली होनी चाहिए। बिजाई से पहले दो-तीन बार जुताई व सुहागा लगा कर खेत अच्छी तरह से तैयार कर लें।

बिजाई का समय : बीज उत्पादन के लिए बिजाई का सही समय 15 जून से 20 जुलाई है।

बीज की मात्रा : बीज की फसल के लिए एक एकड़ में 5-6 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त रहता है। कतार से कतार के बीच 30 सैं.मी. का फासला रखकर बिजाई करें।

बीज उपचार : ग्वार के बीज को राइजोबियम व फास्फोरस घुलनकारक बैक्टीरिया से उपचारित करना चाहिए। बीमारी की रोकथाम के लिए एक ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन, एक लीटर पानी प्रति एक कि.ग्रा. बीज के हिसाब से घोल बनायें तथा बीज को 25-30 मिनट तक बिजाई से पहले भिगोएं। छाया में सुखा कर बिजाई करें।

खाद : ग्वार की फसल में बिजाई के समय 35 कि.ग्रा. डी.ए.पी. प्रति एकड़ के हिसाब से डालें।

खरपतवार नियन्त्रण : ग्वार में खरपतवार नियन्त्रण के लिए बैसालीन 800 मि.ली. प्रति एकड 250 लीटर पानी में मिला कर बिजाई से पहले अच्छी नमी हो तभी छिड़कें और मिट्टी में मिला दें। अगर संसाधन हो तो एक निराई बिजाई के 25-30 दिन बाद लाभदायक होगी।

सिंचाई : अगर फसल जून के तीसरे पखवाड़े में बोई गई है और मानसून देर से आता है तो एक सिंचाई अवश्य करें।

कीट प्रबन्धन : फसल में तेला के आक्रमण की स्थिति में 200 मि.ली. मैलाथिआन 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें।

बीमारियों की रोकथाम : बिजाई के आठ सप्ताह बाद या बीमारी की शुरूआत होने पर स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (30 ग्रा. प्रति एकड़) और कापर आक्सीक्लोराईड (200 ग्रा. प्रति एकड़) को 200 लीटर पानी में मिलाकर 15-20 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें।

कटाई व गहाई : जब फसल की पत्तियां झड़ जाएं तब फसल की कटाई करें। कटी हुई फसल को 7-8 दिन धूप में सुखा कर थ्रैशर से निकाल लें।

मण्डीकरण : ग्वार की फसल को मण्डी में ले जाने से पहले अच्छी तरह से साफ कर लें तथा मण्डी भाव पर नज़र रखें। जब भाव उचित लगे उत्पाद को बेच दें। ग्वार को लम्बे समय तक भण्डारण किया जा सकता है।

किसान ग्वार की उपर्युक्त क्रियाओं को अपनाकर अधिक उपज ले सकते हैं तथा मुनाफा बढ़ा सकते हैं।

contd. from page 31

application, this wastewater can contaminate crops or surrounding vegetation with pathogens that make them unsafe for human consumption. This is a food safety concern.

- The disposal of manure is a concern as well, since manure from industrial livestock systems may contain levels of chemicals such as nitrogen, phosphorus and heavy metals which characterize it as a solid waste when used in excess. This is not only a concern in urban and peri-urban areas, but also faces rural farms as well.
- The main challenge to the viability of both urban and peri-urban agriculture is land availability due to changing land rights, uses and values. High population densities lead to competition and conflicts over land and natural resources as land is converted from agricultural to residential and business uses.

Strategies : Urban policy makers and authorities can substantially contribute to the development of safe and sustainable peri-urban agriculture by creating a conducive policy environment and formal acceptance of peri-urban agriculture as an urban land use by integration of peri-urban agriculture in urban land use planning and zonification. Secondly, there should be provision of training and extension services to peri-urban producers, strengthening & supporting farmer organizations, development of adequate technologies for peri-urban agriculture, enhancing access to water inputs and basic infrastructure, enhancing access of urban farmers to credit and finance, facilitate (direct) marketing, supporting micro-enterprise development. Thirdly, by taking measures that prevent/ reduce health and environmental risks associated with peri-urban agriculture. Improved coordination between health, agriculture and environmental departments, farmers' education on the management of health and environmental risks and training of food vendors and consumers.

हरियाणा खेती एवं अन्य प्रकाशनों में विज्ञापन हेतु विज्ञापन दरें

पृष्ठ	साधारण (रु०)	छः या छः माह से अधिक समय के लिए विज्ञापन दर (रु०)	रंगीन विज्ञापन दर (रु०)
चौथा कवर पृष्ठ	2500/–	2400/–	6000/–
दूसरा कवर पृष्ठ	2400/–	2300/–	5800/–
तीसरा कवर पृष्ठ	2300/–	2200/–	5500/–
साधारण पृष्ठ	2000/–	1900/–	4700/–
आधा पृष्ठ	1200/–	1100/–	–

लिफाफे का मुख पृष्ठ	–	आकार 9 सैं.मी. × 11 सैं.मी.	4000/–
पिछला पृष्ठ	–	आकार 18 सैं.मी. × 22 सैं.मी.	4000/–

जी.एस.टी. - विश्वविद्यालय के नियमों के अनुसार।

विज्ञापन देने हेतु निम्न पते पर संपर्क करें :

प्रकाशन अनुभाग

गांधी भवन

चौ. च. सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय

हिसार (हरियाणा)

फोन : 01662-255234